सबक़-आमोज़
क़ुरआनी क़िस्से

माइल ख़ैराबादी

अनुवाद

ताहिर हाशमी

विषय सूची

क्या ? **कहां ?**

1. बद्र की लड़ाई	5
2. हाथी वाले	24
3. सन्दूक़ वाले	30
4. 'सबा' की रानी	36
5. मृत सागर	44
6. क़ैसर और किसरा की जंग	49

लेखक परिचय

मुहम्मद इसहाक़ 'माइल' ख़ैराबादी भारतीय उपमहाद्वीप के इस्लामी आन्दोलन की परिधि के जाने-माने हस्ताक्षर हैं । उनका जन्म 17 मुहर्रम 1329 हिजरी (1910 ई०) को ख़ैराबाद ज़िला सीतापुर यू०पी० (अवध) में हुआ । आपकी शिक्षा सातवीं कक्षा (वर्नाक्युलर सर्टिफ़िकेट) तक ख़ैराबाद में हुई । उसके बाद निजी रूप से उर्दू में उच्च योग्यता प्राप्त की तथा फ़ारसी में 'मुंशी' और 'कामिल' की परीक्षा पास की ।

कई वर्षों तक ख़ैराबाद और पैंतेपुर (जिला सीतापुर) के स्कूलों में शिक्षण कार्य से संलग्न रहे । मौलाना अबू सलीम मुहम्मद अब्दुल हई (संपादक 'अलहसनात' मासिक उर्दू) के आमंत्रण पर उनके सहायक के रूप में वे रामपुर चले गए और लेखनकार्य में जुट गए । कई वर्षों तक बाल-पत्रिका 'नूर,' जो इदारा 'अलहसनात' से प्रकाशित होती थी, के मुख्य संपादक रहे । जुलाई 1970 ई० में रामपुर से ही अपना स्वतन्त्र मासिक 'हिजाब' (उर्दू) जारी किया ।

'माइल' ख़ैराबादी शायर भी हैं और साहित्यकार भी । वे बच्चों और औरतों के लिए लिखते हैं और बड़े-बूढ़ों के लिए भी । लेकिन वास्तव में वे सिर्फ़ बच्चों के शायर और साहित्यकार हैं । उनकी इस हैसियत को भारत-पाक के अधिकांशत: आलोचकों ने स्वीकार किया है । वे बालोपयोगी साहित्य के एक सफल लेखक हैं । उनकी लगभग 100 से अधिक कृतियां प्रकाशित हो चुकी हैं ।

अवधी बोली में 'आल्हाखंड' के तर्ज़ पर उन्होंने 'हमज़ाकांड' भी तैयार किया है ।

—प्रकाशक

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह रहमान व रहीम के नाम से'

(1)
बद्र की लड़ाई

[इस्लाम और कुफ़्र की पहली लड़ाई जो 17 रमज़ान को हुई ।]

यह लड़ाई क्यों हुई ?

यह कहानी इस तरह है कि नबी करीम (सल्ल०) को मक्का मुअज़्ज़मा में इस्लाम फैलाते हुए बारह साल से ज़्यादा हो गये थे, लेकिन बहुत कम लोग मुसलमान हुए। मक्के के ज़्यादातर सरदार और दूसरे लोग आपके दुश्मन ही रहे। आख़िर में तो ये लोग हुज़ूर (सल्ल०) की जान लेने पर तुल गये। उन्होंने मिलकर आप (सल्ल०) को ख़त्म करने की योजना बनाई। तय किया गया कि एक दिन सुबह-सवेरे हुज़ूर (सल्ल०) के मकान में घुसकर आपको क़त्ल कर दें। मुहम्मद (सल्ल०) ही तो इस्लामी तहरीक के असल आदमी हैं । अगर वह न रहेंगे तो तहरीक भी न रहेगी, यानी न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी ।

अल्लाह जो चाहता है, वही होता है और आदमी की तदबीरें धरी की धरी रह जाती हैं । ठीक उस रात जब मक्के के सरदार आप (सल्ल०) के घर को घेरे पहरा दे रहे थे कि कहीं आप निकल न जाएं, अल्लाह तआला अपने रसूल (सल्ल०) को उसी रात में बड़ी आसानी से निकाल ले गया ।

क़ुरआन में है :

> ''ऐ मुहम्मद (सल्ल०) ! वह वक़्त याद करो जब काफ़िर तुम्हारे ख़िलाफ़ तद्बीरें सोच रहे थे कि तुमको क़ैद कर दें या क़त्ल कर दें या वतन से निकाल बाहर करें । वे (काफ़िर) अपनी चालें चल रहे थे और अल्लाह अपनी तद्बीर कर रहा था और वह

सबसे बेहतर तद्बीरें करने वाला है ।" —8:30

अल्लाह ने आप (सल्ल०) को इशारा किया, आप रात के अंधेरे में घ से निकले और दुश्मनों के बीच से निकलते चले गए । वे आपको देख सके । इतिहासकार लिखते हैं कि उस वक़्त मक्का के सरदार ऊंघ गये थे मुहम्मद (सल्ल०) ने मौक़ा पाया और निकल गए । लेकिन हम इसे अल्ला का करम और चमत्कार समझते हैं । सुबह को जब यह पता चला कि मुहम्म (सल्ल०) रात को ख़ैरियत के साथ निकल गए तो मक्के के सभी सरदा में खलबली मच गई । इनाम का लालच देकर अपने बहादुर आदमियों क दौड़ाया कि या तो पकड़कर लाओ या उनका सिर काट लाओ । लेकिन उनक परेशानी और बढ़ गई जब उन्होंने सुना कि हुज़ूर (सल्ल०) ख़ैरियत के सा मदीना पहुंच गए । इतना ही नहीं, यह भी मालूम हुआ कि मदीने के कुछ लोगों को छोड़कर वहां के सब लोग मुसलमान हो गए हैं और उन्होंने क़सा खाई है कि "हम अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के लिए अपनी जान, अप माल, अपने बाल-बच्चों और अपने बुज़ुर्गों तक को क़ुरबान करने के लि तैयार हैं ।

मदीने में मुसलमानों को ठिकाना मिलना मक्के के क़ुरैशी सरदारों के लि बड़ा ख़तरा था । क़ुरैशी सरदार शाम (सीरिया) और दूसरे मुल्कों के साथ व्यापार करते थे और शाम (सीरिया) की तरफ़ जाने का रास्ता मदीने के पास से जाता था । इस ख़तरे के अलावा इस्लामी तहरीक भी शक्तिशाली हो जाएगी अगर इसी वक़्त इसे दबाने की कोशिश नहीं की गई तो बाद में इसकी रोक-थाम मुश्किल होगी । इसलिए उन्होंने इसकी तद्बीरें शुरू कर दीं ।

रोक-थाम

मक्के के सरदारों ने सबसे पहला काम यह किया कि मदीने के सबसे बड़े सरदार अब्दुल्लाह बिन उबैय को ख़त लिखा कि तुम लोगों ने हमारे आदमी को अपने यहां पनाह दी है । हम ख़ुदा की क़सम खाते हैं कि या तो तुम ख़ुद उससे लड़ो या उसे निकाल दो, नहीं तो हम तुम पर धावा बोल देंगे । हम तुम्हारे मर्दों को क़त्ल कर देंगे और तुम्हारी औरतों को अपनी दासियां बना लेंगे ।

यह अब्दुल्लाह बिन उबैय मदीने का सबसे बड़ा रईस था । हुज़ूर (सल्ल०)

के मदीने पहुंचने से पहले वहां के लोग उसे अपना बादशाह बनाने की तैयारी कर चुके थे । आप (सल्ल०) के मदीना पहुंचने के बाद मदीने के दो बड़े क़बीलों, औस और ख़ज़रज के लगभग सभी लोगों ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया और अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की सरदारी और नेतृत्व क़ुबूल कर लिया तो वह अपना-सा मुंह लेकर रह गया और उसके अरमानों पर पानी फिर गया । वह पहले से ही जला बैठा था । अब मक्के के सरदारों का ख़त पहुंचा तो उसने शरारत शुरू कर दी । लेकिन उसकी एक न चली । मज़े की बात यह है कि अब्दुल्लाह बिन उबैय के एक बहादुर बेटे, जिनका नाम भी अब्दुल्लाह था, वह मुसलमान हो गए थे और इस्लामी तहरीक को आगे बढ़ाने के लिए तन, मन, धन हर तरह से तैयार हो गए थे; उन्हें बाप की भी चिंता न थी ।

मक्के के क़ुरैशी सरदारों ने दूसरा काम यह किया कि मदीने के लोगों को धमकाना शुरू कर दिया । इस सिलसिले में सिर्फ़ एक क़िस्सा बयान कर देना काफ़ी है ।

मदीने के एक सरदार हज़रत सअद बिन मआज़ उमरा करने मक्का गए और मक्के के एक सरदार उमैया बिन ख़लफ़ के घर ठहरे । वह जब काबे शरीफ़ का तवाफ़ (परिक्रमा) करने चले तो हरम के दरवाज़े पर उन्हें अबू जहल मिला । उसने इन्हें टोक कर कहा, "ऐ सअद ! तुमने हमारे उन लोगों को जो हमारे धर्म से निकल गए हैं, पनाह दे दी, तुम उनकी हिमायत का दम भरते हो और यहां तवाफ़ करने आए हो । ख़ुदा की क़सम, अगर तुम उमैया बिन ख़लफ़ के मेहमान न होते तो यहां से हरगिज़ ज़िन्दा न जा सकते ।" हज़रत सअद ने पलटकर जवाब दिया, "उमर बिन हिशाम ! (यह अबू जहल का नाम था) अगर तूने मुझे इस चीज़ (क़ाबा शरीफ़ के तवाफ़) से रोका तो मैं तुझे उस चीज़ से रोक दूंगा जो तेरे लिए इससे ज़्यादा सख़्त और भारी होगी, यानी फिर मक्के का कोई क़ाफ़िला तिजारती माल लेकर शाम (सीरिया) की तरफ़ न जा सकेगा ।"

मदीना पहुंचकर हज़रत सअद बिन मआज़ ने सारा हाल हुज़ूर से कह सुनाया । आपने निहायत समझदारी से काम लेकर दो काम किए :

पहला यह कि मदीने के आस-पास की बस्तियों के सरदारों से मिलकर उनके साथ दोस्ती पैदा कर ली और यह समझौता उनसे हो गया कि एक-दूसरे

के दुश्मन से लड़ेंगे या अगर न लड़ेंगे तो दुश्मन की तरफ़दारी नहीं करेंगे ।

दूसरा काम यह किया कि मदीने से शाम (सीरिया) को जाने वाली शाहर (मुख्य मार्ग) अपनी हिफ़ाज़त में ले ली । इस सड़क पर हुज़ूर (सल्ल० ने मुसलमानों के छोटे-छोटे गिरोह भेजने शुरू कर दिए । कभी-कभी हु (सल्ल०) ख़ुद भी साथ जाते । इससे यह बताना था कि सअद बिन मआ मक्के में अबू जहल से जो कह आए हैं वही होगा । हुज़ूर (सल्ल०) ज कोई गिरोह भेजते तो कह देते कि अभी लड़ना नहीं है, बल्कि मक्के वाल को सिर्फ़ यह दिखाना है कि जैसा करोगे, वैसा भरोगे ।

दूसरी तरफ़ मक्के वालों ने अपने दस्ते मदीने की तरफ़ भेजने शुरू व दिए जिन्होंने लूट-मार शुरू कर दी । मुसलमानों ने उनका मुक़ाबला किया उन्हें भगा-भगा दिया और लूटा हुआ अपना माल वापस लाए ।

अब सुनिए वह असल घटना जिसके कारण बद्र की लड़ाई हुई ।

शाबान सन् 2 हि० (सन् 623 ई० में फ़रवरी की आख़िरी या मार्च व शुरू तारीख़ों) में क़ुरैश का एक बड़ा तिजारती क़ाफ़िला शाम से वापस अ रहा था । उसके साथ पचास हज़ार अशरफ़ी का माल था । काफ़िले के सा 30-40 आदमी ही थे । क़ाफ़िले का सरदार अबू सुफ़ियान था । उसे डर हुअ कि कहीं मुसलमान आकर उसके क़ाफ़िले को लूट न लें । उसने एक आदम को मक्के की तरफ़ दौड़ाया कि वहां से जल्दी मदद लाए । उस आदमी मक्के पहुंचकर अपनी ऊंटनी की काठी उलट दी, उसकी नाक चीर दी औ कान काट दिए । अपने कुर्ते का दामन फाड़कर चिल्लाने लगा—"ऐ क़ुरै के लोगो! बचाओ। अपने तिजारती क़ाफ़िले के माल को बचाओ जिसे अ सुफ़ियान लेकर आ रहा है । दौड़ो, दौड़ो, मुहम्मद अपने साथियों को लेक आ गया । मुझे उम्मीद नहीं कि तुम वक़्त पर पहुंच सकोगे । दौड़ो, दौड़ो जल्दी करो ।"

उस आदमी को बौखलाहट पर सबको यक़ीन हो गया कि क़ाफ़िला य तो लूट लिया गया है या फिर ख़तरा सिर पर है । सब क़ुरैशी सरदार लड़ा के लिए तैयार हो गए । देखते ही देखते एक हज़ार लड़ाकू बहादुर तलवा सौंतकर आ गए । इनमें से छः सौ ज़िरहें (कवच) पहने हुए थे । सौ बहादु अपने घोड़ों पर सवार थे । सवार-पैदल मिलाकर सब बारह-तेरह सौ का लश्क चला । मक्के के तमाम सरदार साथ थे । उनका इरादा था कि क़ाफ़िला भ

बचा लाएं और मदीने पर हमला करके हमेशा के लिए इस्लाम का नामो-निशान ही मिटा दें । यही वजह थी बद्र की लड़ाई की । बद्र जिद्दा के क़रीब मदीने के रास्ते में एक जगह है । यहीं पर इस्लाम और कुफ़्र की पहली लड़ाई लड़ी गई ।

प्यारे नबी (सल्ल०) की चिन्ता

नबी करीम (सल्ल०) को ये सारी ख़बरें पहुंच रही थीं । आपने सोचा कि अगर इस वक़्त हम डर गए और मर्दों की तरह मुक़ाबला न किया तो फिर इस्लाम हमेशा के लिए ख़त्म हो जाएगा । आप तो यह सोच रहे थे और मदीने का यह हाल था कि जो मुसलमान मक्के से हिजरत करके वहां पहुंचे थे वे सब निहत्थे और बेसरो-सामान थे । मदीने के मुसलमान (अन्सार) अभी मुहाजिरीन की-सी तरबियत न पा सके थे, क्योंकि यहां हुज़ूर (सल्ल०) को तशरीफ़ लाए दो साल भी नहीं हुए थे । फिर अब्दुल्लाह बिन उबैय का मुनाफ़िक़ गिरोह भी था जो हर मौक़े पर कायरता और ओछापन दिखाता और सच्चे मुसलमानों को बहकाया करता था । आस-पास के इस्लाम के दुश्मन, जिन यहूदी क़बीलों से हुज़ूर (सल्ल०) ने दोस्ती की थी वे सब क़ुरैश से डरे और सहमें हुए थे । ऐसी हालत में अगर मक्के का हथियार बन्द लश्कर मदीने पर हमला कर दे तो मुट्ठी भर मुसलमान क्या कर सकते थे । अगर हमला न भी हो और क़ुरैश सिर्फ़ अपना क़ाफ़िला बचा ले जाए तब भी मुसलमानों की हवा उखड़ जाएगी । फिर तो दुश्मन का बच्चा-बच्चा शेर हो जाएगा । यह सोचकर हुज़ूर (सल्ल०) ने दिल में तय कर लिया कि इस वक़्त अपने पास जो भी ताक़त है उसे लेकर निकलें, इस्लाम को बचाने के लिए जान पर खेल जाएं और मैदान में फ़ैसला हो जाए कि जीने का बल-बूता किसमें है और किसमें नहीं ।

तैयारी

यह सोचकर प्यारे नबी (सल्ल०) ने अन्सार और मुहाजिरीन को इकट्ठा किया और उनके सामने सारी पोज़ीशन साफ़-साफ़ रख दी कि एक तरफ़ उत्तर में तिजारती क़ाफ़िला है, दूसरी तरफ़ दक्षिण से क़ुरैश का लश्कर चला

आ रहा है। अल्लाह का वादा है कि इनमें से एक तुम्हें मिल जाएगा।[1] बताओ तुम किधर चलना चाहते हो ? जवाब में ज़्यादा लोगों ने यहीं कहा कि क़ाफ़िले पर जीत पाना आसान है और उसके साथ माल भी है। लेकिन आपकी इच्छा कुछ और थी। आपने अपना सवाल फिर दोहराया तो एक जोशीले मुहाजिर हज़रत मक़दाद बिन अम्र ने खड़े होकर कहा—

> "ऐ ख़ुदा के रसूल (सल्ल०) ! जिधर आपका रब आपको हुक्म दे रहा है, उस तरफ़ चलिए। हम आपके साथ हैं। हम बनी-इसराईल की तरह यह कहने वाले नहीं हैं जिस तरह उन्होंने हज़रत मूसा (अलै०) से कह दिया था कि जाओ तुम और तुम्हारा ख़ुदा दोनों लड़े, हम तो यहां बैठे हैं। नहीं, हम तो यह कहते हैं कि चलिए, आप और आपका ख़ुदा दोनों लड़ें और हम आपके साथ जानें लड़ाएंगे, जब तक हम में एक आंख भी घूम रही है।"

मुहाजिरीन की तरफ़ से हज़रत मक़दाद (रज़ि०) ने पूरी बात कह दी। लेकिन अन्सार ख़ामोश थे। उनकी राय लिए बिना हुज़ूर (सल्ल०) कुछ करना नहीं चाहते थे। क्योंकि यह पहला मौक़ा था। अन्सार ने इस्लाम क़ुबूल करते वक़्त जो इक़रार किया था उसे वे कहां तक निभाने के लिए तैयार हैं, इसलिए अन्सार की तरफ़ देखकर आपने तीसरी बार अपना सवाल फिर दोहराया। अब अंसार में से हज़रत सअद बिन मआज़ (रज़ि०) उठे और उन्होंने अर्ज़ किया कि शायद हुज़ूर (सल्ल०) हमसे सवाल कर रहे हैं ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया "हाँ"। उन्होंने कहा : "हम आप पर ईमान लाए हैं। आप जो कुछ अल्लाह की तरफ़ से पेश करते हैं, उसको साफ़-साफ़ सच कहने की गवाही दे चुके हैं। आपका हुक्म मानने की क़सम खा चुके हैं। तो ऐ अल्लाह के रसूल ! जो कुछ आपने इरादा फ़रमा लिया है, उसको कर डालिए। क़सम है उस ख़ुदा की जिसने आपको हक़ के साथ भेजा है।

---

1. यह वादा क़ुरआन की सूरा अनफ़ाल की आयत 7 में इस तरह है :
"याद करो वह मौक़ा जब अल्लाह तुमसे वादा कर रहा था कि दो गिरोहों में से एक तुमको मिल जाएगा। तुम चाहते थे कि कमज़ोर गिरोह तुमको मिले। मगर अल्लाह का इरादा यह था कि अपनी बातों से सच को सच कर दिखाए और काफ़िरों की जड़ काट दे ताकि हक़ (सत्य) हक़ होकर रहे और बातिल (असत्य) बातिल होकर रह जाए। चाहे अपराधियों को यह कितना ही बुरा लगे।"

अगर आप हमें लेकर सामने समुन्दर में जा पड़ें तो हम आपके साथ कूदेंगे और हम में से एक भी पीछे न रहेगा। हम ख़ुश होंगे कि आप कल हमें लेकर दुश्मन से जा भिड़ें। हम लड़ाई में जमकर लड़ेंगे। हम जान न्योछावर करेंगे। हो सकता है कि अल्लाह हम से आप को वह कुछ दिखा दे जिसे देखकर आपकी आंखें ठंडी हो जाएं, आप अल्लाह के भरोसे पर हमको लेकर चलें।"

यह सुनकर आपने फ़ैसला सुना दिया कि दक्षिण की तरफ़ कुरैश के लश्कर का मुक़ाबला करना है। यह फ़ैसला कोई मामूली फ़ैसला न था। जो लोग इस जल्दी में लड़ाई के लिए उठे थे, वे तीन सौ से कुछ ही ज़्यादा (313 या 317) थे। इनमें से सिर्फ़ दो-तीन के पास घोड़े थे और कुल आदमियों में सिर्फ 70 ऊंट जिन पर तीन-तीन, चार-चार आदमी बारी-बारी से सवारी कर सकते थे। सिर्फ़ 60 लोगों के पास ज़िरहें थीं। इसलिए सच्चे फ़िदाइयों के सिवा बाक़ी लोग जिनमें मुनाफ़िक़ थे सहमे जा रहे थे, उनको लग रहा था कि मौत के मुंह में जा रहे हैं। वे ईमान में ऐसे सच्चे न थे कि जान-बूझकर जान-माल का नुक़्सान करें। वे इस मुहिम को पागलपन समझ रहे थे। उनके मुक़ाबले में सच्चे मुसलमान यह समझ चुके थे कि अब जान की बाज़ी लगाने का वक़्त आ गया है। अल्लाह तो दिल के भेद जानने वाला है। उसने मुनाफ़िक़ों के दिल की बात खोलकर रख दी। ख़ूब ही चुटकी ली है। फ़रमाया :

> "याद करो जब मुनाफ़िक़ीन और वे सब लोग जिनके दिलों में रोग लगा हुआ है, कह रहे थे कि इन लोगों को इनके दीन ने पागल कर रखा है। हालांकि अगर कोई अल्लाह पर भरोसा करे तो बेशक अल्लाह बड़ा ज़बरदस्त और हिकमत वाला है।" —8:90

इस फ़ैसले के बाद नबी करीम (सल्ल०) 313 या 317 मुहाजिरीन और अन्सार के साथ चले। 17 रमज़ान को बद्र नामक जगह पर मक्का के कुरैशों से मुक़ाबला हुआ। दोनों फ़ौजों में बड़ा फ़र्क़ था। मक्के के कुरैश हर तरह के साज़-सामान से लैस होकर आए थे। उन्हें घमण्ड था कि वे मुसलमानों को कुचलकर रख देंगे। वे अपने साथ शराबें और तवायफ़ें भी लाए थे। रातों को शराब पीते, डींगें मारते, तवायफ़ों का नाच-गाना देखते और सुनते। उधर मुसलमानों का यह हाल कि रात को नमाज़ें पढ़ते। अल्लाह से अपने

गुनाहों की माफ़ी चाहते और उससे मदद चाहते । ये रात के नमाज़ी दिन में अपनी तलवारें मांझते । उनके पास सामान कम, हथियार कम और सवारियां कम । मगर ये ईमान के पक्के थे । नबी (सल्ल०) मुसलमानों को लेकर मक्के के क़ुरैश से पहले बद्र के मुक़ाम पर पहुंचे थे । आप ने मैदान में ऊंचाई की तरफ़ पड़ाव डाला । मक्के का लश्कर आया तो वह मैदान के नीचे वाले भाग में ठहरा। दोनों फ़ौजों को देखकर कोई फ़ौजी यह नहीं कह सकता था कि मुसलमान जीत जाएंगे । लेकिन अल्लाह ने जीत का वादा किया था, उसने जीत अता की, वरना वाक़ई जीत की कोई सूरत न थी । अल्लाह ने किस तरह मदद की ? ज़रा इसका ज़िक्र भी सुनिए । सीख मिलती है कि अगर मुसलमान सचमुच अल्लाह की मर्ज़ी पर चले तो अल्लाह भी उसकी मदद करता है । अल्लाह की यह मदद क़ुरआन में देखिए :

> ''और याद करो वह मौक़ा जब तुम अपने रब से फ़रियादें कर रहे थे । जवाब में उसने फ़रमाया कि मैं तुम्हारी मदद के लिए आगे-पीछे एक हज़ार फ़रिश्ते भेज रहा हूं । यह बात अल्लाह ने तुमको इसलिए बता दी कि तुम को ख़ुशख़बरी हो और तुम्हारे दिलों को इस से इत्मीनान हो जाए । वरना मदद तो जब भी होती है, अल्लाह की तरफ़ से ही होती है । बेशक अल्लाह ज़बरदस्त और हिकमतवाला है ।'' —8:9-10

अल्लाह तआला ने यह इत्मीनान उस वक़्त दिलाया था और यह ख़ुशख़बरी ऐसे मौक़े पर सुनाई थी जब नबी (सल्ल०) को यह ख़याल आया कि मुसलमान काफ़िरों के मुक़ाबले में कम भी हैं और निहत्थे भी । एक और चार का मुकाबला था । आप (सल्ल०) ने अल्लाह के आगे दुआ के लिए हाथ फैलाए । अर्ज़ किया :

> ''ऐ मेरे रब ! ये हैं क़ुरैश जो बड़े घमण्ड के साथ आए हैं, ताकि तेरे रसूल को झूठा साबित कर दें । ख़ुदा वंदा ! अब आ जाए तेरी मदद जिसका तूने मुझ से वादा किया था । ऐ ख़ुदा ! अगर आज यह मुट्ठी भर जमाअत हलाक हो गई तो फिर ज़मीन पर तेरी इबादत न होगी ।''

इधर हुज़ूर (सल्ल०) यह दुआ फ़रमा रहे थे, उधर दोनों फ़ौजें आमने-सामने हुईं तो देखने वालों ने देखा कि प्यारे रसूल (सल्ल०) के वे साथी जो मक्का

छोड़कर हुज़ूर (सल्ल०) के हुक्म से मदीना आ गए थे, उन्हीं के घरों के लोग हैं । अपने भाई-बन्धुओं के सामने मुक़ाबले के लिए खड़े हैं । किसी का बाप, किसी का बेटा, किसी का चाचा, किसी का भाई उसकी अपनी तलवार का निशाना बन रहा है और अपने हाथों अपने ही जिगर के टुकड़ों पर तलवारें चलानी हैं । ख़ुद हुज़ूर के घर के लोग और आपके दामाद दुश्मनों की फ़ौज में थे । चाहे वे क़ुरैशी सरदारों के दबाव में आए हों, लेकिन आए थे । मुहाजिरीन के लिए यह बड़ा ही सख़्त इम्तिहान था । लेकिन ये लोग हुज़ूर (सल्ल०) की तरबियत का फ़ैज़ उठाए हुए थे । वे इस्लाम पर जमे हुए थे। हुज़ूर (सल्ल०) की दुआ में सबसे ज़्यादा दर्द इन्हीं ग़रीबों के लिए पाया जाता था ।

अन्सार का इम्तिहान भी कम न था । अब तक तो उन्होंने ज़ुबान से 'ला इला-ह इल्लल्लाह मुहम्मदु रसूलुल्लाह' कहा था और ज़ुबान से ही हमदर्दी और मदद ज़ाहिर की थी । आज वे उन लोगों से लड़ने को तैयार खड़े थे जिनको सारे अरब की चौधराहट हासिल थी । उनसे लड़ना सारे अरब से लड़ाई मोल लेना था । यह हिम्मत वही लोग कर सकते हैं जिन्होंने अपनी जान, माल और आल-औलाद का सौदा अल्लाह से कर लिया हो, वरना दुनिया की समझ के मुताबिक़ वह मुर्ख ही होगा जो 'आ बैल मुझे मार' की मिसाल बने । मुहाजिरीन और अन्सार के लिए हुज़ूर (सल्ल०) की यह बेचैनी देखकर हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) जो हुज़ूर (सल्ल०) की हिफ़ाज़त के लिए चुने गए थे और जो उस वक़्त हुज़ूर (सल्ल०) के पीछे खड़े आमीन कह रहे थे, उनसे न रहा गया । अर्ज़ किया—"ऐ अल्लाह के रसूल ! अल्लाह की मदद ज़रूर आएगी । आज मुसलमानों के लिए ख़ुशख़बरी और काफ़िरों के लिए बर्बादी का दिन है ।"

अल्लाह की तरफ़ से मदद

अल्लाह की तरफ़ से एक मदद वह थी कि उसने हुज़ूर से वादा किया था कि तुम्हारी मदद को एक हज़ार फ़रिश्ते भेज रहा हूं । फ़रिश्तों का काम यह होगा कि लड़ाई में मुसलमानों के पांव जमाए रखें । तुम ही जीतोगे, आप (सल्ल०) ने यह बात मुसलमानों को बता दी । इससे उनके दिल मज़बूत हो गए । असल में हर मुहिम उस वक़्त कामियाब होती है जब दिल में पहले

से इत्मीनान हो । दिल की बेयक़ीनी के साथ हर काम अधूरा रह जाता है या ख़राब हो जाता है ।

जब दोनों फ़ौजें आमने-सामने हुईं तो 313 निहत्थे मुसलमानों के मुक़ाबले में काफ़िरों का हर तरह से लैस और हथियारबन्द 1300 का लश्कर नज़र आया । यह एक और चार का मुक़ाबला आदमी को भयभीत करने वाला था । अल्लाह ने यह किया कि ज़रा देर के लिए मुसलमानों पर ऊंघ तारी कर दी । मुसलमान वहीं मैदान में खड़े-खड़े ऊंघ गए थे । इस हालत में अल्लाह ने काफ़िरों की फ़ौज को थोड़ा करके दिखाया । इस तरह जो एक और चार का डर जो स्वाभाविक था, मुसलमानों के दिलों से जाता रहा । अल्लाह तआला ने लड़ाई शुरू होने से पहले पानी बरसा दिया था । इससे यह फ़ायदा हुआ कि मुसलमानों ने हौज़ बनाकर पानी इकट्ठा कर लिया । दूसरा फ़ायदा यह हुआ कि मुसलमान जो ऊपर की तरफ़ थे, पानी जो बरसा तो बहकर नीचे गया, उनकी तरफ़ रेत जम गई और ज़मीन सख़्त हो गई । अब मुसलमानों के पांव रेत में नहीं धंसते थे और आसानी से क़दम उठा सकते थे । तीसरा फ़ायदा मुसलमानों को काफ़िरों की परेशानी से हुआ । काफ़िरों को यह परेशानी हुई कि वे नीचे थे । बारिश का पानी बहकर नीचे गया तो वहां कीचड़ हो गई, काफ़िरों के पांव ज़मीन में धसने लगे और उन्हें चलना मुश्किल हो गया ।

अल्लाह तआला ने दुश्मनों के दिलों में मुसलमानों का डर बिठा दिया और मुसलमानों को लड़ने का तरीक़ा भी बता दिया कि दुश्मनों की गर्दनों और जोड़ों पर वार करो । अल्लाह तआला की इस मदद का क़ुरआन में इस तरह ज़िक्र है :

> "और वह वक़्त याद करो जब अल्लाह अपनी तरफ़ से ऊंघ की सूरत में तुम पर इत्मीनान और बेख़ौफ़ी की हालत तारी कर रहा था और आसमान से पानी बरसा रहा था ताकि तुमको पाक करे और तुमसे शैतान की डाली हुई गन्दगी (काफ़िरों का रोब) दूर कर दे । और तुम्हारी हिम्मत बंधाए और तुम्हारे क़दम जमा दे ।
>
> और वह वक़्त भी याद करो जब तुम्हारा रब फ़रिश्तों को इशारा कर रहा था कि मैं तुम्हारे साथ हूं । तुम मुसलमानों को साबित

क़दम रखो । मैं अभी इन काफ़िरों के दिलों में रोब डाले देता हूं । तो (ऐ मुसलमानो) तुम उनकी गर्दनों और जोड़-जोड़ पर भरपूर चोट मारो । यह इसलिए कि उन लोगों (काफ़िरों) ने अल्लाह और उसके रसूल का मुक़ाबला किया । और जो अल्लाह और उसके रसूल का मुक़ाबला करे, अल्लाह उसके लिए बड़ी सख़्त पकड़ वाला है ।"
—8:11-13

"और याद करो वह वक़्त जब अल्लाह उन (काफ़िरों की तादाद) को तुम्हारे ख़्वाब में थोड़ा दिखा रहा था । अगर वह कहीं तुमको उनकी तादाद ज़्यादा दिखा देता तो ज़रूर तुम लोग हिम्मत हार जाते और लड़ाई के मामले में झगड़ा शुरू कर देते । लेकिन अल्लाह ने ही उससे तुमको बचाया । बेशक वह दिलों के भीतर का हाल जानता है ।"
—8:13

अल्लाह तआला ने अपने नबी को बता दिया कि क़ुरैश के सरदारों में से कौन किस जगह पर मारा जाएगा । हुज़ूर (सल्ल०) ने यह बात मुसलमानों को बता दी । अब तो कोई शक ही नहीं रह गया ।

लड़ाई शुरू

पहले उस ज़माने के दस्तूर के मुताबिक़ एक के मुक़ाबले पर एक की लड़ाई हुई । क़ुरैशी सरदारों ने अपनी बहादुरी के घमण्ड में एक-एक बहादुर सरदार को मुक़ाबले के लिए भेजा, ताकि वह किसी एक मुसलमान को ललकारे । काफ़िरों की चाल यह थी कि मुसलमानों में तो कुछ ही बहादुर हैं, उनको हाथों-हाथ की लड़ाई में मार लेंगे और फिर एकदम हल्ला बोलकर सबको मार भगाएंगे । लेकिन अल्लाह ने उनकी चालों को उन्हीं पर उलट दिया ।

क़ुरैशी सरदारों ने एक मनोवैज्ञानिक चाल यह चली कि बड़े-बड़े लोग एक-एक करके मैदान में भेजे और उनसे कहा कि अपने ख़ानदान के नौजवानों को मुक़ाबले में बुलाना । नौजवान अपने बड़े का लिहाज़ करेगा, तुम उसे क़त्ल कर देना । काफ़िरों को यह मालूम न था कि मुसलमानों ने ईमान के मुक़ाबले में सारे रिश्ते काटकर फेंक दिए थे ।

हज़रत उमर (रज़ि०) के ख़ानदान का एक रईस, जो उनका रिश्तेदार भी था, मैदान में आकर डींगें मारने लगा । हज़रत उमर (रज़ि०) ने बढ़कर उसे

क़त्ल कर दिया । हज़रत अबू उबैदा बिन जर्राह का मुक़ाबला उनके मामूं से हुआ और मामूं भांजे के हाथों मारा गया । हज़रत अब्दुर्रहमान बिन अबू बक्र (जो उस वक़्त तक मुसलमान नहीं हुए थे) मैदान में आए तो हज़रत अबू बक्र आगे बढ़े, लेकिन हुज़ूर (सल्ल०) ने अबू बक्र (रज़ि०) को रोक दिया । हुज़ूर (सल्ल०) को अल्लाह बता चुका था कि वे आगे चलकर मुसलमान हो जाएंगे । इस पर अब्दुर्रहमान वापस अपने लश्कर में चले गए । एक क़ुरैशी बहादुर सरदार हज़रत ज़ुबैर (रज़ि०) के रिश्ते का निकला । वह बड़े डील-डौल वाला था । ज़ुबैर (रज़ि०) ने उसका सामना किया । उसने भाले का वार किया, लेकिन हज़रत ज़ुबैर वार बचा गए और उससे लिपट पड़े । उस वक़्त हज़रत ज़ुबैर (रज़ि०) की मां हज़रत सफ़िया (रज़ि०) जो हुज़ूर (सल्ल०) की फूफी थीं, ममता के मारे चीख़ उठीं, "या रसूलल्लाह !" हुज़ूर (सल्ल०) ने फूफी को यक़ीन दिलाया कि ज़ुबैर (रज़ि०) इस भैंसे को मार गिराएंगे । कुश्ती ऊंचाई पर हो रही थी, दोनों गुत्थम-गुत्था होकर गिरे और लुढ़कते हुए नीचें गिरे तो हज़रत ज़ुबैर (रज़ि०) ऊपर थे । उन्होंने ख़ंजर मारकर उसे ख़त्म कर दिया । पूरे हालात का बयान तो बहुत लम्बा हो जाएगा । सिर्फ़ एक मुक़ाबले का हाल और सुनिए :

इस तरह जब काफ़िरों के सरदार क़त्ल होने लगे तो क़ुरैशी फ़ौज का सरदार उतबा अपने बेटे वलीद और भाई शैबा के साथ मैदान में आया । अभी तक अन्सार में से कोई मैदान में नहीं आया था । उतबा के मुक़ाबले के लिए तीन बहादुर अन्सार आगे बढ़े तो उतबा ने पूछा, "तुम कौन हो !" उन्होंने जवाब दिया, "हम अन्सार हैं ।" उतबा ने कहा, "तुम हमारी बराबरी के नहीं हो । तुम किसान सब्ज़ी खाने वाले, हमसे कमतर, तुम से लड़ना हमारी तौहीन है । वापस जाओ और हमारे बराबर के लोगों को भेजो ।"

अन्सार वापस आए और हुज़ूर को यह बात बताई । हुज़ूर (सल्ल०) ने अपने चचा हज़रत हमज़ा (रज़ि०), चचेरे भाई हज़रत अली (रज़ि०) और बड़े चचा हज़रत अबू उबैदा बिन हारिस को इशारा किया । हज़रत हमज़ा (रज़ि०) सेनापति उतबा के मुक़ाबले पर गए और अली (रज़ि०) और उबैदा (रज़ि०) को इशारा दिया कि तुम इन दोनों से निपटो ।

"हां, अब आएगा मज़ा" कहकर उतबा ने हज़रत हमज़ा (रज़ि०) पर वार किया । उन्होंने वार बचाकर अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ उसकी गर्दन

पर वार किया । उसने गर्दन बचाई तो तलवार कंधे पर पड़ी । उतबा दोहरी ज़िरह पहने हुए था । हज़रत हमज़ा (रज़ि०) ने ज़ोर करके दाब मारी तो तलवार दोहरी ज़िरह को काटती हुई छाती तक उतर गई । उधर वह ज़मीन पर गिरा और इधर हज़रत हमज़ा (रज़ि०) पुकारे– "मैं हूं हज यात्रियों को पानी पिलाने वाले अब्दुल मुत्तलिब का बेटा !"

इस बीच हज़रत अली (रज़ि०) अपने मुक़ाबले के दुश्मन को ख़त्म करके अबू उबैदा की मदद को पहुंच चुके थे । अबू उबैदा और उनके मुक़ाबिल ने एक दूसरे को बुरी तरह ज़ख़्मी कर दिया था । हज़रत अली (रज़ि०) ने बढ़कर उस काफ़िर को क़त्ल किया और अबू उबैदा को उठाकर हुज़ूर (सल्ल०) के पास लाए । अबू उबैदा (रज़ि०) को शहादत की बड़ी तमन्ना थी, पूछा, "या रसूलल्लाह ! क्या मैं शहीदों में से हूंगा ?" हुज़ूर (सल्ल०) ने फ़रमाया, "बेशक तुम शहीद हो ।" थोड़ी ही देर बाद हज़रत अबू उबैदा की रूह निकल गई ।

घमासान की लड़ाई

इस तरह अपने तीन नामी सरदारों और कई दूसरे सरदारों को खोने के बाद क़ुरैशी फ़ौज ने धावा बोल दिया । अब उनका सरदार अबू सुफ़ियान था । हुज़ूर (सल्ल०) ने देखा कि मुट्ठीभर रेत 'शाहतिलवुजूह' कहते हुए काफ़िरों की फ़ौज की तरफ़ फेंकी । साथ ही मुसलमानों को इशारा किया । मुसलमान अचानक काफ़िरों पर टूट पड़े और घमासान की लड़ाई शुरू हो गई । अल्लाह तआला ने हुज़ूर (सल्ल०) के मुट्ठीभर रेत फेंकने का ज़िक्र सूरा अनफ़ाल आयत 17 में इस तरह किया है—"और ऐ नबी, तूने नहीं फेंका बल्कि अल्लाह ने फेंका ।"

घमासान की लड़ाई शुरू हुई तो हुज़ूर ने अपनी तलवार दिखाते हुए कहा कि कौन इसका हक़ अदा करता है । हज़रत अबू दुजाना अन्सारी पुकारे, "या रसूलल्लाह ! मैं ।" आपने उनको तलवार दे दी और कहा कि मेरी तलवार से किसी औरत को क़त्ल न करना ।

हज़रत अबू दुजाना (रज़ि०) हुज़ूर (सल्ल०) की तलवार पाकर गर्व से अकड़कर चले तो हुज़ूर (सल्ल०) ने फ़रमाया कि यह चाल अल्लाह को पसन्द नहीं है, लेकिन इस वक़्त पसंद है । हज़रत अबू दुजाना (रज़ि०) ख़ुशी

में लड़ते-मारते उस तरफ़ निकल गए जहां अबू सुफ़ियान की बीवी हिन्दा क़ुरैशी सरदारों को जोश दिला रही थी । अबू दुजाना (रज़ि०) की तलवार उसके सिर पर चमकी । वह चीख़ी तो हज़रत अबू दुजाना को हुज़ूर (सल्ल०) का हुक्म याद आ गया । उन्होंने हाथ रोक लिया और हिन्दा बच गई ।

इस लड़ाई में हज़रत हमज़ा (रज़ि०) अपने ख़ौद (लोहे का टोप) में शुतुरमुर्ग़ का पर लगाए हुए थे, जिससे वे दूर से पहचाने जाते थे । उन्होंने चुन-चुनकर क़ुरैशी सरदारों को ताका और मार गिराया । बीच में आने वाले काफ़िर भी मारे गए । काफ़िरों ने आपस में पूछा, यह शुतुरमुर्ग़ के परों वाला कौन है ? मालूम हुआ कि हज़रत हमज़ा हैं । बोले आज सबसे ज़्यादा नुक़सान इसी ने हमें पहुंचाया है ।

नतीजा

इस लड़ाई में अल्लाह तआला ने मुसलमानों को फ़तह अता की । क़ुरैश अपने लाव-लश्कर और साज़ो-सामान के बावजूद हारकर भागे । उनके सत्तर बहादुर मारे गए और सत्तर ही पकड़े गए । उनका छोड़ा हुआ माल मुसलमानों को मिला । इस लड़ाई का नतीजा जब अरब के दूसरे क़बीलों ने सुना तो सब हैरान रह गए कि मुट्ठी भर मुसलमानों ने एक बड़ी फ़ौज को हरा दिया । सबके दिलों पर मुसलमानों की धाक बैठ गई ।

क़ैदियों के साथ बर्ताव

लड़ाई के बाद दो बातें फ़ौरन ही सामने आईं । एक यह कि उन क़ैदियों के साथ क्या सुलूक किया जाए (दूसरी बात का ज़िक्र आगे किया जाएगा) । कुछ लोगों का कहना था कि उन्हें क़त्ल कर दिया जाए । हज़रत उमर (रज़ि०) इस मामले में ज़्यादा सख़्त थे । उन्होंने कहा कि इन क़ैदियों को इनके रिश्तेदार मुसलमानों को सौंपा जाए और वे ख़ुद इन्हें क़त्ल करें । हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) का कहना था कि ये सब अपने ही भाई बंधु हैं । इन से फ़िदया (बदले की रक़म) लेकर छोड़ दिया जाए । नबी करीम (सल्ल०) ने हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) की यह बात मान ली । जिन क़ैदियों ने फ़िदये की रक़म दे दी उन्हें छोड़ दिया गया । जो नहीं दे सके उन्हें मुसलमानों में बांट दिया गया कि उन्हें हिफ़ाज़त से रखें और उन्हें कोई तकलीफ़ न होने दें ।

मुसलमानों ने अपने नबी (सल्ल०) की ऐसी ताबेदारी की कि ख़ुद भूखे रहे और उन क़ैदियों को खाना खिलाया। क़ैदियों ने ख़ुद यह बात स्वीकार की है।

एक दिलचस्प क़ानूनी बहस

इस लड़ाई में हुज़ूर (सल्ल०) के घर के लोग भी क़ैद हुए थे और आपके दामाद अबुल आस भी। हुज़ूर के घराने के सरदार हज़रत अब्बास (रज़ि०) थे जिन्होंने उस वक़्त तक अपने इस्लाम का ऐलान नहीं किया था। हुज़ूर (सल्ल०) ने उनसे फ़िदया मांगा। उन्होंने जवाब दिया कि आप जानते हैं कि मैं शुरू से आपका तरफ़दार और मददगार रहा हूं बल्कि दिल से इस्लाम भी क़ुबूल कर लिया है। मुझसे फ़िदया मांगना ग़लत है। आप (सल्ल०) ने चचा की यह दलील रद्द कर दी। फ़रमाया कि मुसलमान होने के लिए ऐलान ज़रूरी है। अब हज़रत अब्बास (रज़ि०) ने अपनी ग़रीबी का रोनारोया तो हुज़ूर (सल्ल०) ने फ़रमाया कि आप जो रक़म घर में फ़लां के पास रख आए हैं, वह तो है। हज़रत अब्बास (रज़ि०) ने पूछा, "आपको किसने ख़बर दी ?" फ़रमाया, "मेरे अल्लाह ने।" हज़रत अब्बास को चुप हो जाना पड़ा। उन्होंने अपना फ़िदया भी दिया और अपनी तरफ़ से घर के दूसरे क़ैदियों का भी।

अबुल आस ख़ाली हाथ थे। उनसे फ़िदया मांगा गया तो वे उदास हो गए। बोले, "ख़ुदा की क़सम मैं झूठा नहीं हूं, अगर आप मुझे छोड़ दें तो मैं मक्के से भेज दूंगा।" हुज़ूर ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। मुसलमानों ने देखा कि हुज़ूर दामाद के साथ भी कोई रिआयत नहीं फ़रमाते तो सिफ़ारिश की कि अबुल आस वाक़ई वादे के सच्चे हैं, वे ज़रूर फ़िदया भेज देंगे।

अबुल आस इस शर्त पर छोड़े गए कि वे मक्का पहुंचकर फ़िदया और अपनी बीवी हज़रत ज़ैनब (मुहम्मद सल्ल० की बेटी) को भेज देंगे। अबुल आस मदीने से मक्का गए, बीवी से सारा हाल कहा। घर में अल्लाह के नाम के सिवा कुछ न था। अचानक हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) को याद आया कि शादी के वक़्त मां (हज़रत ख़दीजा रज़ि०) ने एक हार दिया था। यही हार मदीने भेज दिया गया। जब यह हार हुज़ूर (सल्ल०) ने देखा तो आप

रोने लगे। हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) और इस्लाम के लिए उनकी जानी-माली कोशिशें सब याद आ गईं । यह देखकर मुसलमानों ने कहा, "या रसूलल्लाह ! यह हार बेटी को दे दीजिए ।" इस तरह वह हार हज़रत ज़ैनब को वापस कर दिया गया । अबुल आस मदीने से दिल पर बहुत असर लेकर गए थे, वे मुसलमान हो गए । हज़रत ज़ैनब को मदीने भेज दिया और फिर ख़ुद भी चले आए ।

ग़नीमत के माल का बंटवारा

ग़नीमत क़ा माल उस माल को कहते हैं जो हारी हुई फ़ौज छोड़ भागती है और जीतने वाली फ़ौज उस पर क़ब्ज़ा कर लेती है । मुसलमानों ने इस्लाम क़ुबूल करने के बाद यह पहली लड़ाई लड़ी थी । अल्लाह की तरफ़ से ग़नीमत के माल के बारे में कोई हिदायत नहीं आई थी । मुसलमान समझते थे कि जैसे पहले होता था यानी जीतने वाला सिपाही दुश्मन से जो माल छीन ले उसी का है, तो जब मक्के की फ़ौज हार कर भागी तो ज़्यादातर मुसलमान काफ़िरों से माल छीनने और इकट्ठा करने में लग गए । बहुत कम लोग थे जिन्होंने काफ़िरों का पीछा किया । अबू सुफ़ियान हारी हुई फ़ौज को लेकर निकल गया । अगर मुसलमान यह ग़लती न करता तो काफ़िरों की ताक़त हमेशा के लिए कुचल कर रख दी जाती ।

उस वक़्त हज़रत सअद बिन मआज़ (रज़ि०) जो हुज़ूर (सल्ल०) के रक्षक दस्ते में शामिल थे, उनके चेहरे पर बड़ी नागवारी थी । हुज़ूर (सल्ल०) ने उनसे कहा, "ऐ सअद ! मालूम होता है कि ग़नीमत का माल इकट्ठा करने वालों की बात तुम्हें पसन्द नहीं आई ।" उन्होंने अर्ज़ किया, "या रसूलल्लाह ! यह पहली लड़ाई है जिसमें अल्लाह के फ़ज़्ल से हम जीते और काफ़िर हारे । इस वक़्त उनको क़ैदी बनाकर उनकी जानें बचा लेने के बदले उनको अच्छी तरह कुचल डाला जाता तो अच्छा था ।" अब यह हुआ कि जिस मुसलमान के हाथ जो माल लगा वह उसका मालिक बन बैठा । लेकिन वे लोग जिन्होंने दुश्मनों का पीछा किया था उन्होंने इस तरह दावा किया कि ग़नीमत के माल में उनका भी बराबर का हिस्सा है । अगर वह दुश्मन का पीछा करके दूर तक न भगा देते और दूसरों की तरह माल जमा करने में लग जाते तो हो सकता था कि दुश्मन पलटकर हमला कर देते और लेने के देने पड़ जाते ।

एक तीसरा गिरोह था जिसके ज़िम्मे नबी (सल्ल०) की हिफ़ाज़त थी । उसका कहना था कि सबसे बढ़कर ख़िदमत तो हमने की । अगर हम हुज़ूर (सल्ल०) के चारों तरफ़ अपनी जानों की दीवार न बना देते और हुज़ूर (सल्ल०) को कुछ नुक़्सान पहुंच जाता तो न जीत होती न माल मिलता और न माल के बटवारे का सवाल उठता ।

ग़नीमत के माल के बटवारे का इस्लामी तरीक़ा

तीनों गिरोह अपनी-अपनी जगह अड़े थे और हुज़ूर (सल्ल०) की तरफ़ देख रहे थे कि आप क्या फ़रमाते हैं । अल्लाह तआला ने बात बढ़ने न दी । सूरा 'अनफ़ाल' नाज़िल फ़रमाई और ग़नीमत के माल के बटवारे का तरीक़ा बताया और कुछ और हिदायतें भी फ़रमाईं । अल्लाह ने अपने नबी (सल्ल०) से फ़रमाया—"ऐ नबी, कह दो कि यह माल अनफ़ाल है ।"

> "ऐ नबी ! मुसलमान तुम से अन्फ़ाल के बारे में पूछते हैं । कहो, यह अन्फ़ाल तो अल्लाह और उसके रसूल के हैं । तो तुम लोग अल्लाह से डरो, और अपने आपस के ताल्लुक़ात दुरुस्त करो, और अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करो, अगर तुम सच्चे मोमिन हो ।" —8:1

क़ुरआन में अन्फ़ाल के अल्लाह और रसूल के होने की दलीलें अटूट हैं ।

(1) यह कि अल्लाह ने वादा किया था कि दो में से एक तुम्हें मिल जाएगा । या तो क़ाफ़ले का माल या मक्के वालों पर जीत । (आयत—7)

(2) अल्लाह ने मुसलमानों की मदद के लिए एक हज़ार फ़रिश्ते भेजे । इन फ़रिश्तों ने मुसलमानों के दिलों को मज़बूत रखा और काफ़िरों के दिलों में रोब डाला । (आयत—9)

(3) मुसलमानों पर ज़रा देर के लिए ऊंघ तारी कर दी और ख़्वाब में दिखाया कि काफ़िरों की तादाद कम है और पानी बरसा दिया और मुसलमानों की तरफ़ की ज़मीन सख़्त और काफ़िरों की तरफ़ कीचड़ हो गई । (आयत—11)

(4) "हक़ीक़त यह है कि तुमने उन्हें क़त्ल नहीं किया बल्कि अल्लाह ने उनको क़त्ल किया । और तूने नहीं फेंका, बल्कि अल्लाह ने फेंका । (यह इस तरफ़ इशारा है कि बद्र की लड़ाई में नबी (सल्ल०) ने मुट्ठीभर रेत लेकर

काफ़िरों की तरफ़ फेंकी थी और उसी के साथ मुसलमानों ने हमला कर दिया था ।) तो यह इसलिए था कि अल्लाह मोमिनों को एक बेहतरीन आज़माइश से कामियाबी के साथ गुज़ार दे । बेशक अल्लाह सुनने और जानने वाला है ।" —8:17

यह ईमान और अल्लाह के एहसान की बातें मुसलमानों के सामने आईं तो सबने सिर झुका दिए और ग़नीमत का सब माल लाकर हुज़ूर के सामने ढेर कर दिया । ख़ुदा का शुक्र अदा किया कि माल की आज़माइश से बच गए और वे ख़ुश हो गए जब उन्होंने सूरा अन्फ़ाल की आयत 27-28 सुनी :

> "ऐ ईमान लाने वालो, जानते-बुझते अल्लाह और उसके रसूल के साथ ख़यानत न करो । अपनी अमानतों में ग़द्दारी न करो और जान लो कि तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद हक़ीक़त में तुम्हारी आज़माइश के सामान हैं और अल्लाह के पास बदला देने के लिए बहुत कुछ है ।" —8:27-28

नबी (सल्ल०) ने अपने प्यारे साथियों की कितनी अच्छी तरबियत फ़रमाई थीं और वे कैसे प्यारे साथी थे जो अल्लाह और उसके रसूल की हिदायत पाकर उस पर अमल करते थे ।

ग़नीमत के माल के बटवारे का क़ायदा

नबी (सल्ल०) ने ग़नीमत के माल के बटवारे का यह क़ायदा बना दिया कि माल का पांचवां हिस्सा अल्लाह के काम और उसके ग़रीब बंदों की मदद के लिए बैतुल-माल (इस्लामी ख़ज़ाना) में दाख़िल कर दिया जाए और बाक़ी चार हिस्से उस पूरी फ़ौज में बांट दिए जाएं जो लड़ाई में शरीक हों । सूरा अन्फ़ाल आयत 41 में है :

> "और तुमको मालूम हो कि जो कुछ ग़नीमत का माल तुमने हासिल किया है उसका पांचवां हिस्सा अल्लाह और उसके रसूल और रिश्तेदारों और यतीमों और मिस्कीनों और मुसाफ़िरों के लिए है । अगर तुम ईमान लाए हो अल्लाह पर और उस चीज़ पर जो फ़ैसले के रोज़ यानी दोनों फ़ौजों की मुठभेड़ के दिन हमने अपने बंदे पर नाज़िल की थी (तो यह ख़ुशी-ख़ुशी अदा करो) अल्लाह हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है ।" —8:41

बद्र की लड़ाई में सिर्फ़ उन्हीं मुसलमानों के लिए तरबियत का सामान नहीं है जो अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के ज़माने में आपके साथ थे बल्कि आज भी सूरा अन्फ़ाल पढ़िए तो हमारी तरबियत के बहुत से रुख़ मिलेंगे। हम अपने सरदार की इताअत का जज़्बा पाएंगे। हमारे अन्दर से माल की मुहब्बत क़म होगी। आख़िरत का ख़ौफ़ पैदा होगा और हमारे दिल में सहाबा-किराम की अज़मत का सिक्का बैठेगा और हम चाहेंगे कि हम भी सहाबा-किराम के नक़्शे-क़दम पर चलें।

(2)
हाथी वाले

हाथियों वाले कौन थे ? उनकी कहानी में हमारे लिए क्या नसीहत है ? हमारा ख़याल है कि अगर इसका पूरा क़िस्सा बयान कर दिया जाए तो हमें आप-से-आप जवाब मिल जाएगा । हमें यानी मुसलमानों को भी और उन्हें भी जो बिला वजह इस्लाम से बैर रखते हैं और ऐसी हरकतें करते हैं जिनसे इस्लाम का तो कुछ नहीं बिगड़ता, वे ख़ुद अपना ही सब कुछ बिगाड़ लेते हैं । इस क़िस्से में मुसलमानों के लिए तसल्ली है और इस्लाम से बैर रखने वालों के लिए डरावा । यह क़िस्सा कुरआन में इस तरह आया है :

> ''क्या नहीं देखा तूने, तेरे रब ने हाथी वालों के साथ क्या किया ? क्या उसने उनकी चाल को अकारत नहीं कर दिया ? और उन परिन्दों के झुण्ड के झुण्ड भेज दिए जो उन पर पक्की हुई मिट्टी के पत्थर फेंक रहे थे फिर उनका यह हाल कर दिया जैसे जानवरों का खाया हुआ भूसा ।'' —105:1-5

अब इस क़िस्से की तफ़सील सुनिए :

लगभग साढ़े चार हज़ार साल पहले अल्लाह के एक अज़ीम पैग़म्बर हज़रत इब्राहीम (अलै०) गुज़रे हैं । हज़रत इब्राहीम (अलै०) ने अल्लाह के हुक्म से उस जगह जहां मक्का शहर बसा है 'काबा' बनाया था । यह लगभग बीस मीटर लम्बी-चौड़ी और इतनी ही ऊंची एक सादा इमारत है, जो अल्लाह की इबादत के लिए बनाई गई थी । अल्लाह तआला ने अपने बन्दों को इसकी ज़ियारत (यात्रा) का हुक्म दिया था । इसलिए अल्लाह के बंदे इस हुक्म को फ़र्ज़ समझते हैं । जब से काबा बना है तब से अब तक उसकी ज़ियारत के लिए जाते हैं । ज़ियारत और हज के मानी एक ही हैं । जो लोग काबे की ज़ियारत करके आते हैं उन्हें हाजी कहा जाता है ।

अल्लाह ने काबे को जो मक़बूलियत अता की है वह दुनिया में किसी और इमारत या 'स्थान' को नसीब नहीं हुई । काबे की यह मक़बूलियत ख़ुदा के दुश्मनों को कभी नहीं भायी । उनकी नज़रों में काबा कांटे की तरह खटकता रहा और आज भी खटकता है । काबे की मक़बूलियत को कम करने के लिए तरह-तरह के जतन किये गए और आज भी किये जा रहे हैं । मगर ''वह शमा क्या बुझे जिसे रौशन ख़ुदा करे ।'' सब तारीफ़ अल्लाह के लिए

है । काबे की मक़बूलियत दिनों-दिन बढ़ रही है और ख़ुदा के दुश्मन कुढ़ रहे हैं । अपने-अपने जतन करते हैं लेकिन मुंहकी खाते हैं । मुंहकी खाने का सबसे बड़ा सबक़-आमोज़ क़िस्सा वह है जिसका ज़िक्र अल्लाह ने क़ुरआन की सूरा फ़ील में किया है । यह कहानी इस तरह है :

मक्का के दक्षिण में यमन नाम का एक छोटा-सा राज्य है जिसके न जाने कितने राजा और बादशाह हो चुके हैं ।

नबी (सल्ल०) की पैदाइश से कुछ ही दिन पहले की बात है। यमन में अब्रहा नामक बादशाह था जो ईसाई था । उसने काबे की मक़बूलियत देखी कि हर साल हज़ारों-लाखों आदमी काबे की वजह से मक्के की तरफ़ खिंचे चले जाते हैं । उसने सोचा कि क्यों न यमन में काबे से ज़्यादा ख़ूबसूरत इमारत बनवाकर लोगों को उसकी ज़ियारत के लिए बुलाया जाए । जिस तरह काबे की वजह से मक्के वालों को सारे अरब में चौधराहट और इज़्ज़त हासिल है, वह यमन वालों को मिल जाए । इस तरह अपना ईसाई मज़हब भी ख़ूब फैलेगा और यमन के व्यापार में भी चार चांद लग जाएंगे । दूसरे देशों का माल यमन में आने लगेगा और यमन का माल दूसरे देशों को जाने लगेगा और सरकारी ख़ज़ाना भी भरने लगेगा ।

अब्रहा ने सोचा और ऐसा ही किया । उसने यमन की राजधानी 'सनआ' में एक बहुत ख़ूबसूरत और शानदार गिरजा बनवाया । गिरजा तैयार होने के बाद उसने हब्श के ईसाई बादशाह को लिखा कि अब मैं काबे के हज के बदले इस गिरजे का हज कराऊंगा और जिस तरह भी होगा लोगों को इस गिरजे की तरफ़ मोड़ूंगा । यह बात अब्रहा ने अपने दरबार में भी खुले आम कह दी । साथ ही चारों तरफ़ ऐलान भी करा दिया कि सब लोग अब काबे की ज़ियारत के बजाय इस गिरजे की ज़ियारत करने के लिए आएं । इस ऐलान से उसका एक मक़सद यह भी था कि मक्के वाले यह ऐलान सुनकर बुरा मानेंगे, हो सकता है कि बुरा मानकर वे कोई ऐसा काम कर बैठें कि मक्के और काबे पर धावा बोलने का बहाना मिल जाए ।

उसकी यह चाल आजकल के उन चालाक लोगों से मिलती-जुलती है जो अपने से कमज़ोरों को सताने के लिए शरारतें करते रहते हैं । कभी उनके बुज़ुर्गों को बुरा-भला कहकर उन्हें ग़ुस्सा दिलाते हैं और कभी उनकी पाक जगहों की बेइज़्ज़ती करके ग़ुस्सा दिलाने की कोशिश करते हैं । मतलब यह होता है कि कुछ भला-बुरा उनकी ज़ुबान से निकले तो बदले में अच्छी-ख़ासी पिटाई कर दी जाए । अब्रहा ने कुछ ऐसी ही बातें की लेकिन उसको कोई

ऐसा बहाना न मिल सका कि वह मक्के पर धावा बोल देता । कहते हैं कि फिर उसने अपने एक भेदी से कहा कि वह गिरजे में नापाकी कर दे । भेदी ने जाकर गिरजे को नापाक कर दिया । यानी अब्रहा ने उसी तरह बहाना बनाया जिस तरह हमारे यहां कहीं मन्दिर में गाय का सिर या मस्जिद में सूअर का सिर काटकर डाल दिया जाता है और फिर हिन्दू-मुस्लिम दंगे करा दिए जाते हैं ।

गिरजे के नापाक होने के बाद अब्रहा ने क़सम खाई कि अब मैं उस वक़्त तक चैन से न बैठूंगा, जब तक काबे को ढा न दूं । उसके बाद सन् 571 ई० में अब्रहा साठ हज़ार फ़ौज और तेरह हाथी लेकर मक्के पर चढ़ दौड़ा । रास्ते में 'ज़ुनफ़र' नामी एक अरब सरदार ने उसे रोकना चाहा, लेकिन वह गिरफ़्तार कर लिया गया । फिर आगे चलकर एक दूसरे अरब सरदार नुफ़ैल ने रास्ता रोका । वह भी हारा और पकड़ा गया । अरब के रेगिस्तान में रास्ता बताने के वादे पर उसकी जान बख़्शी गई। नुफ़ैल के रास्ता बताने पर अब्रहा अपनी फ़ौज के साथ तायफ़ पहुंचा । वहां के मशहूर क़बीले बनू सक़ीफ़ ने उसे रोकने के बजाए उसके पास जाकर कहा कि आप जिस काबे को ढाने के लिए आए हैं वह मक्के में है । हमारे मन्दिर का देवता 'लात' है, यह काबा नहीं है । आप हमारे मन्दिर को छोड़ दें । इसके बदले हम आपको मक्के का रास्ता बताएंगे । अब्रहा ने यह बात मान ली और बनी-सक़ीफ़ ने उसे रास्ता दिखाने के लिए अपना एक आदमी उसके साथ कर दिया । कुछ दूर चलकर यह आदमी मर गया । उस आदमी की क़ब्र पर अरब के लोग मुद्दतों थूकते रहे और बरसों बनी-सक़ीफ़ को ताने देते रहे कि तुम वे लोग हो जिन्होंने अब्रहा की मदद की थी । अगर देखा जाए तो इस तरह के लोग आज भी हर जगह मिल जाएंगे जो अपने दीन-धर्म को क़ुरबान करके दुश्मनों से मिल जाते हैं ।

अब्रहा मक्के के क़रीब पहुंचा तो रास्ते में मक्के के क़ुरैश सरदारों की चरागाह में उनके ऊंट, भेड़, बकरियां चर रहे थे । अब्रहा ने उन्हें पकड़ लिया । इस चरागाह में नबी (सल्ल०) के दादा अब्दुल मुत्तलिब के भी दो सौ ऊंट थे । मवेशियों पर क़ब्ज़ा करके अब्रहा ने मक्के वालों को पैग़ाम भेजा कि मैं तुमसे लड़ने नहीं आया हूं, बल्कि काबा को ढाने आया हूं । अगर तुम न लड़ो तो मैं भी न लडूंगा और तुम्हारी जान और माल बच जाएगा ।

अब्रहा का आदमी पैग़ाम लेकर मक्का पहुंचा । उस वक़्त अब्दुल मुत्तलिब मक्के के सबसे बड़े सरदार थे । उन्होंने कहा कि "हम अब्रहा से लड़ने की

ताक़त नहीं रखते । यह काबा अल्लाह का घर है, वह चाहेगा तो अपने घर को बचा लेगा ।"

अब्रहा के पैग़म्बर ने कहा कि आप चलकर अब्रहा से बात कर लीजिए । अब्दुल मुत्तलिब तैयार हो गए और अब्रहा के पास गए । अब्दुल मुत्तलिब बड़े ख़ूबसूरत आदमी थे और हर तरह के कपड़ों में बड़े शानदार लगते थे । अब्रहा उन्हें देखकर उठा और आगे बढ़कर उनका इस्तक़बाल किया । अपना तख़्त ख़ाली छोड़कर उनके पास ही बैठ गया । उसने पूछा, "आप क्या चाहते हैं ?"

अब्दुल मुत्तलिब ने कहा, "आप हमारे ऊंट वापस कर दें ।" अब्रहा को यह मांग पसंद न आई। उसने कहा कि मैं आपको देखकर बहुत मुतास्सिर हुआ था, लेकिन आपने इतनी कम मांग की कि आप मेरी नज़रों से गिर गए । क्या आपकी नज़र में आपके ऊंट काबे से बढ़कर हो गए ? उन्होंने जवाब दिया कि मैं तो सिर्फ़ अपने ऊंटों का मालिक हूं, उन्हीं के बारे में अर्ज़ कर रहा हूं । रहा यह घर, तो इसका मालिक अल्लाह है, वह ख़ुद अपने घर की हिफ़ाज़त कर लेगा ।

अब्रहा ने यह जवाब सुनकर कहा कि क्या काबे का रब उसको मुझसे बचा लेगा ? उन्होंने जवाब दिया, "आप और वह जाने ।" यह कहकर अब्दुल मुत्तलिब अब्रहा के पास से उठकर चले आए। अब्रहा ने अपने लश्कर को आगे बढ़ने का हुक्म दिया ।

मक्का वापस आकर अब्दुल मुत्तलिब ने सबसे कहा कि अपने बाल-बच्चों को लेकर पहाड़ों में चले जाएं ताकि वे अब्रहा की तलवार से बच जाएं, इसके बाद मक्के के सरदारों को साथ लिया, काबे में गए और उसके दरवाज़े का कुंडा पकड़कर अल्लाह तआला से दुआ की "ऐ अल्लाह ! अपने घर को और अपने घर के ख़ादिमों को अब्रहा से बचा ले । ख़ुदाया ! बंदा अपने घर की हिफ़ाज़त करता है, तू भी अपने घर की हिफ़ाज़त फ़रमा । ऐ अल्लाह ! कल ईसाइयों की सलीब और उनकी तदबीरें तेरी तदबीर के मुक़ाबले में ग़ालिब न आ जाएं । परवरदिगार, अगर तू हमारे काबे को, जिसकी तरफ़ मुंह करके हम तेरी इबादत करते हैं, उसके हाल पर छोड़ना चाहता है तो जो चाहे कर । ऐ मेरे रब ! तेरे सिवा मैं उनके मुक़ाबले में किसी और से कोई उम्मीद नहीं रखता । ऐ मेरे रब, उनसे अपने हरम को बचा ले । इस घर का दुश्मन तेरा दुश्मन है । अपनी बस्ती को बर्बाद करने से उनको रोक ।"

ज़रा ठहर कर इन दुआओं पर ग़ौर कीजिए । इस कठिन और बुरे वक़्त

में अब्दुल मुत्तलिब और क़ुरैशी सरदारों ने काबे में रखे हुए 360 बुतों में से किसी को नहीं पुकारा। सारे सहारे बेकार मालूम हुए। इंसान की भी अजीब आदत है। बुरे वक़्त पर अल्लाह को पुकारता है और जब बुरा वक़्त टल जाता है तो चढ़ावे उन्हीं बुतों पर चढ़ते हैं। अल्लाह को इंसान भूल जाता है। अपने झूठे देवताओं के नाम ले-लेकर उनके गुण गाता है। यही हाल उन क़ुरैशी सरदारों का था। अब उन्हें अल्लाह के सिवा कोई देवता नज़र नहीं आ रहा था। लेकिन जब अल्लाह ने यह बला टाल दी तो हुबल की जय पुकारी जाने लगी और 360 बुतों पर नज़राने चढ़ने लगे। अजीब इबरत का मुक़ाम है। क़ुरआन ने ऐसी ज़हनियतों का नक़्शा ख़ूब-ख़ूब पेश किया है। एक मिसाल देखिए :

> ''और जब बादलों की तरह कोई मौज उठकर उन्हें ढांप लेती है उस वक़्त वे ख़ुलूस के साथ अल्लाह ही को पुकारते हैं। फिर जब अल्लाह उनको नजात देता है तो फिर वे उन्हीं (बुतों) की तरफ़ फिर जाते हैं। –31:32

दुआएं मांग कर अब्दुल मुत्तलिब और उनके साथी पहाड़ों में चले गए। दूसरे दिन अब्रहा मक्के में दाख़िल होने के लिए बढ़ा। लेकिन उसका हाथी 'महमूद' जो आगे-आगे चल रहा था, अचानक बैठ गया। उसे बहुत तबर मारे गए, अंकुश से कचोके दिए गए। यहां तक कि उसे ज़ख़्मी कर दिया गया, मगर उसे न उठना था न उठा। अपनी जगह से हिला तक नहीं। हां उसे किसी और तरफ़ चलने का इशारा किया जाता तो झट उठकर भागने लगता। लेकिन काबे की तरफ़ चलने का इशारा किया जाता तो फ़ौरन बैठ जाता और किसी तरह आगे बढ़ने के लिए तैयार न होता।

अब्रहा और उसके साथी इस कोशिश में थे कि अचानक परिंदों के झुण्ड के झुण्ड उड़ते हुए आए और उनके सरों पर मंडलाने लगे। उनकी चोंच और पंजों में पत्थरों के छोटे-छोटे टुकड़े थे। इन कंकरों में छोटे-से-छोटे मटर के बराबर और बड़े-से-बड़ा अख़रोट के फल के बराबर था। परिन्दों ने यह कंकड़ अब्रहा की फ़ौज पर बरसाना शुरू कर दिया। कंकड़ लगने से फ़ौजियों की अजीब दुर्गति होती। कंकड़ी लगते ही खुजली शुरू हो जाती। खुजलाने से खाल फट जाती। गोश्त पीप और ख़ून की तरह बहने लगता और हड्डियां निकल आतीं। ख़ुद अब्रहा की यही दुर्गति बनी। उसका बदन टुकड़े-टुकड़े होकर रह गया। बदहवास होकर सब यमन की तरफ़ भागे। नुफ़ैल, रास्ता बताने वाले से कहा कि रास्ता बता। उसने जवाब दिया, ''अब

भागने की जगह कहां है । ख़ुदा तुम्हारा पीछा कर रहा है ।"

इस भगदड़ में आगे-पीछे सब ही भागे, मगर एक भी ज़िन्दा न बच पाया । यह घटना जिस जगह हुई वह मुज़दलिफ़ा और मिना के बीच में है । यहां की ज़मीन आस-पास की ज़मीन से नीची है । हाजी जब अरफ़ात से वापस आतें हैं तो पहले मुज़दलिफ़ा में फिर मिना में ठहरते हैं और मिना से मक्का वापस आते हैं। हुक्म है कि इस जगह से तेज़ी से दौड़कर गुज़र जाना चाहिए । नबी (सल्ल०) जब अरफ़ात से वापस हुए थे तो इस जगह रफ़्तार तेज़ कर दी थी । इस जगह का नाम 'वादी-ए-मुहस्सिर' है । नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया कि 'वादी-ए-मुहस्सिर' में न ठहरा जाए । यह इतनी बड़ी घटना थी और ऐसी खुली हुई थी कि दस बरस तक मक्के के सरदारों को ख़ुदा के सिवा किसी की याद नहीं आई । लेकिन फिर वे ख़ुदा को भूल गए और बुतों की तरफ़ घूम गए ।

उस वक़्त के शायरों ने बहुत से क़सीदे इस के बारे में लिखे । इस घटना के 50 दिन बाद नबी करीम (सल्ल०) की पैदाइश हुई । चालीस साल की उम्र में आप नबी हुए । फिर जब सूरा 'फ़ील' नाज़िल हुई तो आपकी उम्र ज़्यादा से ज़्यादा पैंतालीस साल की होगी । उस वक़्त वे लोग मौजूद थे, जिन्होंने यह सब अपनी आंखों से देखा था ।

(3)

सन्दूक़ वाले

[सन्दूक़ वालों का क़िस्सा क़ुरआन मजीद की सूरा बक़र: में बड़े विस्तार से आया है जो आयत 246 से शुरू होता है और आयत 251 पर ख़त्म होता है ।]

सन्दूक़ वालों का क़िस्सा अब से लगभग तीन हज़ार साल पहले का है और हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम से एक हज़ार साल पहले का है । वास्तव में यह कहानी 'बनी-इस्राईल' की है जिसको अल्लाह तआला ने अपने बन्दों को सबक़ लेने के लिए बयान किया ।

उस वक़्त बनी-इस्राईल नाम मात्र के मुसलमान रह गए थे । वह अल्लाह, रसूल और आख़िरत पर ईमान तो रखते थे लेकिन बिल्कुल उसी तरह जैसे आजकल बहुत से मुसलमानों का हाल है कि अपने नाममात्र ईमान के साथ दूसरों की देखा-देखी वह सारी आदतें अपनाए हुए हैं जो शिर्क और कुफ़्र की सीमाओं को छू लेती हैं । आजकल के मुसलमानों की तरह वे भी अल्लाह और रसूल को ज़ुबान से मानते थे, लेकिन उनके कर्म दूसरों जैसे थे । वह अल्लाह को सबसे बड़ा हाकिम मानते थे और रसूल को अल्लाह के हुक्मों का चलाने वाला जानते थे। लेकिन चाहते यह थे कि जिस तरह दूसरी क़ौमों में बादशाह हुआ करते हैं उसी तरह उनमें भी कोई बादशाह हो और वे रसूल के फ़ैसलों के ख़िलाफ़ उस बादशाह के फ़ैसलों को माने और उसी के मुताबिक़ अमल करें । उनका सोच-विचार ग़ुलामों जैसा हो चुका था । ख़िलाफ़त और बादशाही का फ़र्क़ उनके ज़ेहनों से निकल चुका था । उस वक़्त हज़रत समुएल नबी उनके सरदार थे, जो बहुत बूढ़े हो चुके थे । उनके बुढ़ापे को बहाना बनाकर बनी-इस्राईल के बड़े लोगों ने यह तर्क दिया कि कोई जवान और हट्टा-कट्टा शख़्स उनका सरदार बने, जिसकी सरदारी में वे दुश्मनों से लड़ें । जो लोग इस्लामी तारीख़ से वाक़िफ़ है वे जानते हैं कि ख़िलाफ़त को बादशाही में बदलने का ख़याल सबसे पहले दुनिया-परस्त जत्थे के बड़े लोगों को ही आया और आख़िर में उन्होंने इस्लामी हुकूमत को बादशाही में बदल डाला। बनी-इस्राईल के बड़े लोगों ने जत्था बनाकर आम मुसलमानों में उसका प्रचार किया । आम जनता ने भी उनकी हां-में-हां मिलाई और फिर एक दिन उन्होंने

अपने नबी हज़रत समुएल अलैहिस्सलाम से कहा कि हमारे लिए एक बादशाह नियुक्त कर दीजिए ताकि हम उसकी सरदारी में अल्लाह के रास्ते में लड़ें ।

देखा आपने, नबी से वे कैसी मक्कारी की बातें कर रहे थे । एक तरफ़ यह मांग कि बादशाह नियुक्त कर दो । दूसरी तरफ़ यह बहाना कि हम अल्लाह की राह में जंग करेंगे । हज़रत समुएल अलैहिस्सलाम उनके इस फ़रेब से अच्छी तरह वाक़िफ़ थे । उन्होंने पूछा : कहीं ऐसा तो न होगा कि तुमको लड़ाई का हुक्म दिया जाए और फिर तुम न लड़ो । वे कहने लगे, भला ऐसा कैसे हो सकता है कि अल्लाह की राह में न लड़ें जबकि हमें अपने घरों से निकाल दिया गया है और हमारे बाल-बच्चे हम से अलग कर दिए गए हैं । (आयत—246)

इस जगह बाइबिल की किताब समुएल—1 में दिए गए विवरण पर एक नज़र डाल ली जाए तो इबरत और नसीहत के कई और भी पहलू सामने आएंगे और उनसे बनी-इस्राईल के ज़ेहन का खोट पूरी तरह समझ में आ जाएगा । लिखा है कि :—

"समुएल ज़िन्दगी भर इस्राइलियों की अदालत करता रहा और फिर सब इस्राईली सरदार इकट्ठे होकर लामा में समुएल के पास आए और उससे कहने लगे कि देख, तू बूढ़ा और कमज़ोर है और तेरे बेटे (यानी बनी इस्राईल) तेरी राह पर नहीं चलते । अब तू किसी को हमारा बादशाह मुक़र्रर कर दे जो दूसरी क़ौमों की तरह हमारे मुक़दमों का फ़ैसला करे । यह बात समुएल को बुरी लगी और समुएल ने ख़ुदावंद से दुआ की और ख़ुदावंद ने समुएल से कहा कि जो कुछ ये लोग तुझ से कहते हैं तू उसको मान, क्योंकि उन्होंने तेरी नहीं बल्कि मेरी तौहीन की है कि मैं उनका बादशाह न रहूं । और समुएल ने उन लोगों को जो उससे बादशाह की मांग कर रहे थे, ख़ुदा की सब बातें कह सुनाईं और उसने कहा कि जो बादशाह तुम पर राज करेगा उसका तरीक़ा यह होगा कि वह तुम्हारे बेटों को लेकर अपने रथों के लिए, अपने रिसाले में नौकर रखेगा और वह उसके रथों के आगे-आगे दौड़ेंगे । वह उनको हज़ार-हज़ार के सरदार और पचास-पचास के जमादार बनाएगा और कुछ से हल जुतवाएगा और फ़सल कटवाएगा और अपने लिए जंग के हथियार और रथों के साज़ बनवाएगा और तुम्हारी बेटियों को गूंधन और बावरचन और रोटियां पकाने वाली बनाएगा । और तुम्हारे खेतों और अंगूर के बाग़ों को और ज़ैतून के

बाग़ों को जो अच्छे-अच्छे होंगे, लेकर अपने ख़िदमतगारों को देगा । और तुम्हारे खेतों और अंगूर के बाग़ों का दसवां हिस्सा लेकर अपने ख़ूजों और ख़ादिमों को देगा । और तुम्हारे नौकरों, लौंडियों और तुम्हारे ख़ूबसूरत जवानों और तुम्हारे गधों को लेकर अपने काम पर लगाएगा । और वह तुम्हारी भेड़-बकरियों का भी दसवां हिस्सा लेगा । तो फिर तुम उसके ग़ुलाम बन जाओगे । तुम उस दिन उस बादशाह की वजह से, जिसे तुमने अपने लिए चुना होगा, फ़रियाद करोगे । लेकिन उस दिन ख़ुदा तुमको जवाब न देगा । तो भी लोगों ने समुएल की बात न सुनी और कहने लगे, "नहीं, हम तो बादशाह चाहते हैं जो हमारे ऊपर हो ताकि हम भी दूसरी क़ौमों की तरह हों और हमारा बादशाह हमारी अदालत करे और हमारे आगे-आगे चले और हमारी तरफ़ से लड़े ।" ख़ुदावंद ने समुएल से कहा कि तू इनकी बात मान ले और इनके लिए एक बादशाह नियुक्त कर ।

फिर समुएल लोगों से कहने लगा— जब तुमने देखा कि 'बनी-अमून' का बादशाह नाहुस तुम पर चढ़ आया तो तुमने मुझ से कहा कि हम पर कोई बादशाह हुकूमत करे, हालांकि ख़ुदावंद तुम्हारा ख़ुदा, तुम्हारा बादशाह था । सो अब उस बादशाह को देख जिसे तुमने चुन लिया और जिस के लिए तुमने मांग की थी । देखो, ख़ुदावंद ने तुम पर बादशाह नियुक्त कर दिया । अगर तुम ख़ुदावन्द से डरते रहो और उसको पूजते रहो, और उसकी बात मानते रहो, और ख़ुदावंद का हुक्म न तोड़ो और तुम और वह बादशाह भी, जो तुम पर हुकूमत करता है, ख़ुदावंद अपने ख़ुदा के रास्ते पर चलते रहो तो ख़ैर । लेकिन अगर तुम ख़ुदावंद की बात न मानो बल्कि ख़ुदावंद के हुक्म को तोड़ने लगो तो ख़ुदावंद का हाथ तुम्हारे ख़िलाफ़ होगा जैसे वह तुम्हारे बाप-दादा के ख़िलाफ़ होता था । और तुम जान लोगे और देख लोगे कि तुमने ख़ुदावंद से अपने लिए बादशाह मांगकर कितनी बड़ी शरारत की है— अब रहा मैं, तो ख़ुदा न करे कि तुम्हारे लिए दुआ न करके ख़ुदावंद का ग़ुनहगार ठहरूं । मैं तो वही राह तुमको बताऊंगा जो अच्छी और सीधी है ।"

हज़रत समुएल अलैहिस्सलाम ने जिस आदमी को बनी-इस्राईल का बादशाह नियुक्त किया उसका नाम बाइबिल में साऊल है और क़ुरआन में तालूत । यह आदमी हज़रत यूसुफ़ (अलै०) के छोटे भाई बिनयामीन के ख़ानदान से

था । इसकी उम्र 30 साल थी और वह बहुत ही ख़ूबसूरत और सजीला जवान था । उसका क़द इतना ऊंचा था कि दूसरे लोग उसके कंधों तक आते थे । वह अपने बाप का गधा ढूंढने निकला था कि अचानक इधर आ निकला । अल्लाह तआला ने नबी को इशार किया कि यही है वह शख़्स जिसे हमने बनी-इस्राईल की बादशाही के लिए चुना है । हज़रत समुएल ने उसी को बादशाह नियुक्त कर दिया ।

यह सुनकर बनी-इस्राईल बोले, "वह कैसे हम पर बादशाह बनने का हक़दार हो गया । उसकी तुलना में हम उस से ज़्यादा बादशाही के हक़दार थे । वह तो कोई मालदार आदमी भी नहीं है ।"

नबी ने जवाब दिया—अल्लाह ने तुम्हारे मुक़ाबले में उसी को चुना है । देखो, यह बहुत ज़्यादा बुद्धिमान, तनदुरुस्त और हट्टा-कट्टा है । और अल्लाह को इख़्तियार है कि जिसे चाहे अपना मुल्क दे ।

अल्लाह बहुत दूर तक देखता और सोचता है और वह सब कुछ जानता है । साथ ही उनके नबी ने उन्हें यह भी बताया कि ख़ुदा की तरफ़ से उसके बादशाह बनाने की एक निशानी यह है कि उसके ज़माने में वह सन्दूक़ तुम्हें मिल जाएगा जिसमें तुम्हारे रब की तरफ़ से तुम्हारे लिए दिल के इत्मीनान का सामान है जिसमें हज़रत मूसा के परिवार और हज़रत हारून के परिवार की छोड़ी हुई, यादगारें हैं जिसको इस वक़्त फ़रिश्ते संभाले हुए हैं । अगर तुम मोमिन हो तो यह तुम्हारे लिए बहुत बड़ी निशानी है । —आयत 247-248

यह सन्दूक़ एक लड़ाई में फ़िलिस्तीनी मुशरिकों ने बनी-इस्राईल से छीन लिया था । लेकिन मुशरिकों ने यह सन्दूक़ जिस शहर और जिस बस्ती में ले जाकर रखा, वहां महामारी और बीमारियां फूट पड़ीं । अकाल पर अकाल पड़ने लगे । आख़िर डर के मारे उन्होंने सन्दूक़ को एक बैलगाड़ी पर रखकर गाड़ी हांक दी । गाड़ीवान के बिना बैल उसे इधर से उधर जिधर उनका मुंह उठता लिए फिरते रहे । इसी बात को क़ुरआन ने इस तरह कहा है कि 'इस वक़्त उसको फ़रिश्ते संभाले हुए हैं ।' फ़रिश्ते उस गाड़ी को हांकते हुए बनी-इस्राईल की तरफ़ ले आए ।

जिस दिन से यह मुबारक सन्दूक़ बनी-इस्राईल से छीना गया था, वे बेहद उदास रहने लगे थे । उनका ख़याल था कि अल्लाह की रहमत उनसे रूठ गई और अब उनके बुरे दिन आ गए । लड़ाइयों में वे बराबर हारते रहे यहां

तक कि उनकी हिम्मत टूट गई और वे कायर होकर रह गए । इस सन्दूक़ का आना उनकी हिम्मत बढ़ाने का बहुत अच्छा ज़रिया बन गया, उनके हौसले बढ़ गए । इस सन्दूक़ में वे तख़्तियां थीं जो अल्लाह ने हज़रत मूसा (अलै०) को दी थीं । 'तौरेत' की वह असल किताब भी थी जो ख़ुद हज़रत मूसा (अलै०) ने लिखवाकर लावी ख़ानदान को दी थी । एक बोतल में वह मन्न-सलवा' था ताकि आगे की नस्लें अल्लाह के एहसान को याद रखें । और हज़रत मूसा (अलै०) की वह लाठी भी थी जो सांप बन जाती थी । कितनी बड़ी निशानी बनी-इस्राईल को मिली थी । उनका ईमान मज़बूत हो जाना चाहिए था । मगर ग़रीब ख़ानदान के एक आदमी का बादशाह बन जाना उन्हें खलता रहा । यह वही बात है जो आज देखने में आती है । एक ग़रीब कैसा ही नेक और ज़हीन हो, बड़े लोग उसे कभी ख़ातिर में नहीं लाते । बड़े लोग हमेशा यह चाहते हैं कि ग़रीब की बुद्धिमानी से ख़ुद फ़ायदा उठाएं और उसे सिर्फ़ इतना देदें कि वह पेट भर ले और उनका ग़ुलाम बना रहे ।

बनी-इस्राईल ने दिल से न चाहते हुए नबी के हुक्म से तालूत को अपना बादशाह तो मान लिया, मगर उनमें से ज़्यादातर लोग तालूत का हुक्म मानने के लिए तैयार न थे । जैसा कि आगे क़ुरआन में है :—

"जब तालूत फ़ौज लेकर चला तो उसने कहा, आगे दरिया पर अल्लाह की तरफ़ से तुम्हारी जांच होने वाली है । जो उसका पानी पिएगा वह मेरा साथी नहीं । मेरा साथी वह है जो उससे प्यास न बुझाए, हां एक-आध चुल्लू पी ले तो कोई हर्ज नहीं । (लेकिन जब लश्कर दरिया पर पहुंचा तो) कुछ लोगों के अलावा सबने ख़ूब जी भर कर पानी पीया ।

फिर जब तालूत और उसके साथी मुसलमान दरिया पार करके आगे बढ़े तो उन्होंने (जिन्होंने जी भर कर पानी पीया था) तालूत से कह दिया कि आज हम में जालूत और उसके लश्करों का मुक़ाबला करने की ताक़त नहीं है । लेकिन जो लोग यह समझते थे कि उन्हें एक दिन अल्लाह से मिलना है, उन्होंने कहा, बहुधा ऐसा हुआ है कि कम तादाद के लोग अल्लाह के हुक्म से ज़्यादा तादाद वालों पर विजयी रहे हैं । अल्लाह सब्र करने वालों का साथी है । फिर जब वह जालूत और उसके लश्करों के मुक़ाबले पर निकले तो उन्होंने दुआ की, ऐ हमारे रब, हमें सब्र अता फ़रमा । हमारे क़दम जमा

दे और काफ़िरों पर हमें फ़तह नसीब कर ।" (आयत—249-250)

यह दुआ करने वाले वे लोग थे जिन्होंने अपने बादशाह तालूत के हुक्म के मुताबिक़ दरिया का पानी एक-आध चुल्लू ही पीया था । उनमें से एक नौजवान दाऊद ने आगे बढ़कर जालूत को क़त्ल कर डाला और फिर इन्हीं कम लोगों ने ऐसे जोश के साथ जंग की कि सबको मार भगाया ।

तालूत दाऊद से बहुत ख़ुश हुआ । उसने अपनी बेटी दाऊद से ब्याह दी । यही नौजवान आगे चलकर बनी-इस्राईल का बादशाह हुआ और अल्लाह ने उसे अपना नबी बनाया । यही हज़रत दाऊद (अलै०) थे । अल्लाह तआला ने उनको हज़रत सुलैमान (अलै०) जैसा बेटा अता फ़रमाया। हज़रत सुलैमान (अलै०) भी अल्लाह के नबी और बनी-इस्राईल के बादशाह हुए । अल्लाह ने दाऊद (अलै०) को सल्तनत और हिकमत का इनाम दिया और जिन-जिन चीज़ों का चाहा, उनको ज्ञान दिया । अगर अल्लाह इस तरह इन्सानों के एक गिरोह को दूसरे के ज़रिए हटाता न रहता तो ज़मीन का इन्तिज़ाम ही बिगड़ जाता । लेकिन दुनिया के लोगों पर अल्लाह का बड़ा फ़ज़्ल है कि वह इस तरह फ़साद और बिगाड़ को ख़त्म करता रहता है । (आयत—251)

सन्दूक़ वालों की इस घटना को ध्यान में रखा जाए तो अल्लाह के बन्दों को आज भी मायूस होने की ज़रूरत नहीं है । हां, यह शर्त ज़रूर है कि उनका एक सरदार हो और वे अपने सरदार का हुक्म मानें और अल्लाह के हुक्मों पर अमल करें ।

(4)

'सबा' की रानी

'सबा' दक्षिणी अरब की एक बहुत बड़ी जाति का नाम है । इतिहास की किताबों में हज़रत ईसा मसीह की पैदाइश से ढाई हज़ार साल पहले इस जाति का नाम आता है । यह जाति खेती-बाड़ी के साथ-साथ व्यापार का काम भी करती थी। इन्हीं दो पेशों से सबा की क़ौम को तरक़्क़ी मिली । खेती के लिए उन्होंने सिंचाई का ऐसा तरीक़ा अपनाया जो उस वक़्त बाबुल के सिवा दुनिया में कहीं भी नहीं था । यमन में क़ुदरती दरिया नहीं थे, अब भी नहीं हैं । खेतों को पानी देने के लिए उन्होंने यह इन्तिज़ाम किया कि बारिश के दिनों में पहाड़ों से जो बरसाती नाले बह निकलते थे उन पर जगह-जगह बांध-बांधकर बड़े-बड़े तालाब बना लिए थे । इन तालाबों से नहरें निकालीं और इन नहरों को पूरे यमन में फैला दिया । इन नहरों की वजह से वह हरियाली और शादाबी आई कि हर तरफ़ बाग़-ही-बाग़ नज़र आता था । इस शादाबी का ज़िक्र पुरानी किताबों में बड़ी शान से आता है । यही ज़िक्र पवित्र क़ुरआन अपने ख़ास अन्दाज़ में (जो कहीं और देखने में नहीं आता) इस तरह करता है :

> "सबा के लिए उनके देश में ही एक निशानी मौजूद है, दो बाग़ दाएं और बाएं ।"
> —34:15

यानी सबा की पूरी ज़मीन फुलवारी बनी हुई थी । आदमी जहां भी खड़ा होता, जिस ओर मुंह करता, उसे अपने दाएं-बाएं बाग़-ही-बाग़ नज़र आते । यमन की ख़ास पैदावार लोबान, ऊद, अम्बर, मुश्क, मुर्र, क़ुफ़्रां, क़सब-अल-ज़रीरा, सलीख़ा और ऐसी ही दूसरी ख़ुशबूदार चीज़ें थीं । यह क़ीमती चीज़ें इतनी ज़्यादा पैदा होती थीं कि सबा के लोग उन्हें जी भर के इस्तेमाल करते थे और फिर भी वह ख़त्म न होती थीं । इसलिए वे इन चीज़ों को बाहर सप्लाई करने पर मजबूर हुए, और इस तरह उनमें व्यापार की नींव पड़ी ।

व्यापार के लिए इस क़ौम को ख़ुदा ने बेहतरीन जगह इनायत की थी । अगर आप नक़्शा फैलाकर देखें तो यमन को दुनिया का चौराहा कहना ही ठीक होगा । इस भौगोलिक स्थिति से इस क़ौम ने ख़ूब फ़ायदा उठाया, एक

हज़ार बरस से ज़्यादा समय तक यही क़ौम पूर्व और पश्चिम के देशों का चौराहा बनी रही । यमन के साहिल पर इसने कई बन्दरगाह बना रखे थे । इन बन्दरगाहों पर पूर्व की तरफ़ से चीन का रेशम, इन्डोनेशिया और मालाबार के गरम मसाले, हिन्दुस्तान के कपड़े और तलवारें और पश्चिम के मुल्कों से पूर्वी अफ़्रीक़ा के जंगी ग़ुलाम, शुतरमुर्ग़ के पर और हाथी-दांत वग़ैरह पहुंचते थे और फिर इन्हीं बन्दरगाहों से ये सारी चीज़ें उत्तरी मुल्कों अरब, मिस्र और शाम वग़ैरह की मंडियों में पहुंचती थीं जहां से यह माल रोम और यूनान तक जाता था । सबा की क़ौम ने अपने इस व्यापार पर अपना एकाधिकार रखने के लिए बड़ा मज़बूत इन्तिज़ाम कर रखा था । समुन्दरी और ज़मीनी दोनों बड़े रास्तों पर दूर-दूर तक इनका क़ब्ज़ा था । समुन्दर में इनके जहाज़ी बेड़े और ज़मीन के रास्ते में हिफ़ाज़ती दस्ते घूमा करते थे । थल मार्ग के व्यापारी अड्डों पर आज भी इनकी चौकियों के निशान पाए जाते हैं ।

इसी सबा देश के शाही ख़ानदान में वह लड़की पैदा हुई जो बड़ी होकर सबा की महारानी बनी । इतिहास की किताबों में उसका नाम बिलक़ीस बताया गया है, लेकिन इस्लामी इतिहासकारों का कहना है कि उन्हें इस नाम की पुष्टि के लिए कहीं से कोई प्रमाण नहीं मिल सका । इस्लामी इतिहास में वह सबा की महारानी के नाम से मशहूर है ।

सबा की महारानी को अल्लाह तआला ने ज़ेहनी और जिस्मानी दोनों तरह से अच्छी ख़ूबियों का मालिक बनाया था । वह बादशाही में बेहतरीन सूझबूझ वाली और अच्छा इन्तिज़ाम करने वाली साबित हुई । दूसरी तरफ़ जिस तरह उसकी क़ौम दुनिया भर में अपनी शोहरत (प्रसिद्धि) का डंका बजा रही थी, उसी तरह सबा की महारानी ने भी अपनी बहादुरी और जंगी सूझ-बूझ की धाक अपनी क़ौम के दिलों पर बिठा दी थी । बड़े-बड़े जनरल और सेनापति उसकी तलवार का लोहा मानते थे और उसके मुल्की इन्तिज़ाम की सराहना करते थे । सबके दिल उसके आगे झुके हुए थे और सब पूरी तरह उसका हुक्म मानते थे । सबा की महारानी ने अपने लिए हीरे-जवाहरात जड़ा सजा-सजाया एक ऐसा तख़्त बनवाया था जो उस वक़्त तक किसी बादशाह के पास नहीं था । उसकी राजधानी शहर 'मआब' था जो यमन की मौजूदा राजधानी 'सनआ' से 55 मील उत्तर-पूर्व के कोने में स्थिति था । सबा की महारानी और सबा की क़ौम की इन्तहाई तरक़्क़ी का यह वही ज़माना है जब अल्लाह तआला

ने हज़रत दाऊद (अलै०) के बेटे हज़रत सुलैमान (अलै०) को नबी बनाया और नुबूवत के साथ-साथ हुकूमत भी अता फ़रमाई, ऐसी हुकूमत जिसे देखकर सबा की महारानी भी दंग रह गई । अल्लाह तआला के हुक्म से जिन्न, पशु और पक्षी सभी उनका हुक्म मानते थे । हवा भी उनके हुक्म पर चलती थी । हज़रत सुलैमान (अलै०) का तख़्त हवा में उड़ता हुआ चलता था । जिन्न उनके लिए बड़े-बड़े महल, बड़ी-बड़ी देगें, साफ़-सुथरे हौज़ और फ़र्श बनाते थे । अल्लाह का नबी इन सारी चीज़ों को अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ अपनी जनता की भलाई के लिए इस्तेमाल करता था और ख़ुद एक मामूली इंसान की तरह रहता-सहता और खाता-पीता था ।

हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम को हर वक़्त अपनी ज़िम्मेदारियों का एहसास रहता था । शुक्र, सब्र और नफ़्स के मिले-जुले जज़्बात हर वक़्त उन पर तारी रहते थे और आपका पूरा वक़्त दीन के प्रचार में गुज़रता था । आपको ख़बर मिली कि सबा के मुल्क पर एक औरत की बादशाही है । अल्लाह की तरफ़ से उसको हर तरह के ऐशो-आराम के सामान हासिल हैं । उसका तख़्त भी बहुत बड़ा है । लेकिन वह अपने पैदा करने वाले और ये नेमतें अता करने वाले को नहीं पहचानती । ख़ुद भी सूरज की पूजा करती है और उसकी क़ौम भी सूरज के आगे सिर टेकती है । शैतान ने उस क़ौम के करतूत उनके लिए ख़ुशनुमा बना दिए हैं और वे अपने कामों और अक़ीदों से सन्तुष्ट हैं । इसकी वजह यह है कि शैतान ने इस क़ौम के लोगों को अल्लाह की राह पर जाने से रोक दिया है । इसी वजह से वह सीधा रास्ता नहीं पाते । अगर उनकी समझ में आ जाए कि आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है उसका मालिक और हाकिम अल्लाह है । तो उम्मीद है कि वह अल्लाह रब्बुल-आलमीन को ही सजदा करेंगे ।

क़ुरआन पाक में जिस ख़ूबसूरत अन्दाज़ में सबा की महारानी के मुसलमान होने का क़िस्सा बयान हुआ है और उसमें दावत का जो फ़ितरी (मनोवैज्ञानिक) ढंग अपनाया गया है, उसी अन्दाज़ में बयान करना हमारे लिए तो नामुमकिन है । इसलिए क़ुरआन पाक को सामने रखते हुए अपने अन्दाज़ में बयान करते हैं और दुआ करते हैं कि अल्लाह तआला पढ़ने वालों को इससे सबक़ हासिल करने की तौफ़ीक़ बख़्शे । हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम को ज्योंही सबा की महारानी के बारे में मालूम हुआ उसे इस्लाम का पैग़ाम भेजने के लिए

वे बेचैन हो गए । सोचने लगे कि उसे अल्लाह का पैग़ाम भेजने के लिए क्या तरीक़ा इस्तेमाल करें । आप अपने जिन्नों, पशुओं और पक्षियों को लेकर उस पर चढ़ाई भी कर सकते थे और इस तरह उसे ज़बरदस्ती भी अपने अधीन कर सकते थे । लेकिन आपने ऐसा नहीं किया । आपने सबा की महारानी और उसके फ़ौजियों के दिलों को निशाना बनाया और सारी हिकमत उन लोगों को यह विश्वास दिलाने में लगा दी कि सुलैमान अल्लाह के नबी और उसके बन्दे हैं । आपने अपना दावती ख़त सबा की महारानी के नाम भेजा । यह दावती ख़त आज भी अपने असल लफ़्ज़ों में मौजूद और महफ़ूज़ है । दुनिया भर के विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि इतने कम लफ़्ज़ों वाला लेकिन मज़मून के लिहाज़ से भरपूर ख़त आज तक किसी ने किसी को नहीं लिखा । बात यह थी कि अल्लाह का नबी जानता था कि सबा की महारानी एक महान देश के इन्तिज़ाम की ज़िम्मेदार है। ऐसी व्यस्त रानी को लम्बा-चौड़ा ख़त पढ़ने की फ़ुर्सत कहां होगी । उसे तो कम लफ़्ज़ों में भरपूर पैग़ाम पहुंचाना चाहिए । इसलिए आपने एक पक्षी 'हुद्हुद' के ज़रिए निहायत कम अल्फ़ाज़ वाला भरपूर पैग़ाम का अपना ख़त सबा की महारानी के सामने ठीक उस वक़्त डलवा दिया जब वह आग की पूजा के लिए जा रही थी ।

ऐसे असाधारण तरीक़े से अचानक उसे यह ख़त मिला तो उसे बड़ा ताज्जुब हुआ । उसने ख़त पढ़ा और जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि सबा की महारानी निहायत अक़्लमन्द और समझदार औरत थी । ऐसा मालूम होता है कि साहित्य की बारीकी से पूरी तरह वाक़िफ़ थी । उसने पढ़ा । ख़त के कम अल्फ़ाज़ और भरपूर पैग़ाम को देखकर दंग रह गई । उसने बार-बार ख़त पढ़ा और हर बार अल्लाह का पैग़ाम उभर-उभर कर उसके सामने आया । 'कूज़े में दरिया' या 'गागर में सागर' की ज़िन्दा मिसाल देखकर ख़त उसने अपने क़ब्ज़े में ले लिया और वहीं से पलट पड़ी। साथ वाले जो यह सब देख रहे थे, समझ गए कि आज कोई असाधारण बात रानी के सामने आई है ।

सबा की महारानी ने दरबार लगाने का हुक्म दिया । ख़ुद अपने अनुपम सिंहासन पर बैठी, ख़त निकाला और दरबारियों को ख़ुद पढ़कर सुनाया । लिखा था :—

"यह सुलैमान की तरफ़ से अल्लाह रहमान व रहीम के नाम से शुरू

किया गया है । (मज़मून यह है कि) मेरे मुक़ाबले में सरकशी न दिखाओ और मुस्लिम (आज्ञाकारी) होकर मेरे पास हाज़िर हो जाओ ।"

ख़त सुनाकर उसने कहा, यह है ख़त जो सुलैमान ने एक पक्षी के ज़रिए मेरे पास भेजा है ।

ऐ क़ौम के सरदारो, तुम राजदूत भेजने के तरीक़े और साधन से वाक़िफ़ हो । वह नुमाइन्दे की शक्ल में एलची भी भेज सकता था और इस तरह हम पर अपनी शानो-शौकत ज़ाहिर कर सकता था । लेकिन उसने ऐसा नहीं किया । हमें एक सादा-सा छोटा-सा ख़त लिखा है और हमें दावत दी है कि हम इस पर ग़ौर करें ।

ऐ क़ौम के सरदारो ! यह ख़त फ़िलिस्तीन और शाम (सीरिया) के महान् ताक़तवर हाकिम की तरफ़ से हमारे नाम है । यह अल्लाह रहमान और रहीम के नाम से शुरू किया गया है । इसका मतलब यह है कि यह अल्लाह की ही मेहरबानी है कि उसने एक तरफ़ सुलैमान को ऐसी अज़ीम सल्तनत अता की, दूसरी तरफ़ हमें यमन जैसी दुनिया की जन्नत बख़्शी । आज दुनिया में हर जगह देवी-देवताओं के नाम से ख़त-किताबत शुरू करने का रिवाज है । सुलैमान ने हमें दावत दी है कि हम सारे देवी-देवताओं को छोड़कर उस एक रहमान व रहीम के बन्दे बन जाएं जिसने इन देवी-देवताओं को भी बनाया है । फिर सुलैमान का यह लिखना कि हम अल्लाह रब्बुल-आलमीन की सरकशी छोड़कर अल्लाह के मुस्लिम (आज्ञाकारी) की हैसियत से उसके सामने हाज़िर हो जाएं, उसकी अहमियत को और भी बढ़ा देता है ;

ऐ मेरी क़ौम के सरदारो, तुम गवाह हो कि आज तक मैं दुनिया के किसी ज़बरदस्त ज़ालिम बादशाह से नहीं डरी । तुमने जिस ज़बरदस्त बादशाह की फ़ौजों से टक्कर ली, मैंने तुम्हारे बीच रहकर तलवार चलाई और तुमने मेरे क़दम पीछे हटते नहीं देखे । अगर सुलैमान बादशाह बनकर हमें अपनी ताक़त से डराता तो हम नहीं डरते । लेकिन मालूम ऐसा होता है कि वह अल्लाह का नबी है । अब तुम इस मामले में मुझे अपनी राय दो । तुम जानते हो कि मैं तुम से मशविरा करने के बाद ही फ़ैसला करती हूं ।

सबा की रानी यह कह कर ख़ामोश हो गई । तमाम सरदारों ने एक ज़ुबान होकर उसे जवाब दिया—हमें आपकी सूझ-बूझ पर पूरा भरोसा है । आप जो फ़ैसला करेंगी, हमें मंजूर होगा । अगर आप सुलैमान से लड़ना चाहें तो

हम भी कम नहीं हैं, लड़ना हम भी जानते हैं । हम किसी से नहीं डरते, ताक़त हमारे पास भी है । फ़ैसला आपके हाथ में है । आप ख़ुद देख लेंगी कि हम आपके फ़ैसले पर किस तरह अमल करते हैं । सबा की रानी ने सरदारों को हर तरह अपना फ़ैसला मानने पर तैयार पाया तो वह बोली— बादशाह जब किसी मुल्क में घुस आते हैं तो उसे ख़राब कर देते हैं और इज़्ज़त वालों को अपमानित कर देते हैं । यह चढ़ाई किसी सुधार या ख़ैरख़्वाही (भला चाहने) के लिए नहीं होती । लेकिन सुलैमान अपनी फ़ौज लेकर हम पर अचानक टूट पड़ना नहीं चाहता । वह दूसरे बादशाहों की तरह हमारी दौलत और हमारी तरक़्क़ी के ज़रियों को छीनना नहीं चाहता । वह हमें अपना ग़ुलाम बनाना भी नहीं चाहता । वह हम से यह भी नहीं कहता कि अपना मुल्क हमें दे दो । वह तो बस यह कहता है कि अल्लाह की इबादत करो और मेरे मार्गदर्शन पर चलो । उसके लफ़्ज़ 'मेरे' ने मुझे शक में डाला है । अगर वह अपनी पैरवी ख़ुदा के हुक्मों के मुताबिक़ चाहता है तो मुझे इसमें कोई हरज दिखाई नहीं देता । हां, अगर वह 'सुलैमान बादशाह' के आगे हमें झुकाना चाहता है तो फिर मेरा फ़ैसला कुछ और होगा । मैं उसे जांचना चाहती हूं कि क्या वह नबी है या सिर्फ़ बादशाह ?

"अच्छा तो मैं अपने दूत भेजती हूं और कुछ तोहफ़े साथ करती हूं । फिर देखूंगी कि मेरे दूत क्या जवाब लेकर पलटते हैं और सुलैमान के बारे में उन की क्या राय होती है ।"

इसके बाद सबा की रानी ने अपने कुछ चुने हुए सरदारों के साथ यमन के बेहतरीन तोहफ़ों को लेकर सुलैमान के पास भेजा । तोहफ़े इतने क़ीमती थे कि अगर कोई दुनियावी बादशाह होता तो फ़ौरन उन्हें क़ुबूल कर लेता । लेकिन हज़रत सुलैमान ने सभी तोहफ़े यह कहकर वापस कर दिया कि 'अल्लाह ने हमें इससे ज़्यादा दिया है ।'

दूत यह जवाब लेकर आए । उन्होंने सबा की रानी के सामने हज़रत सुलैमान की बात दोहराई और बताया कि इतना ज़ोर और ताक़त रखते हुए भी वह कितने परहेज़गार और नेक इंसान हैं । बात-बात पर उनका सिर अल्लाह के आगे झुक जाता है ।

सबा की रानी यह सुनकर उछल पड़ी । उसने कहा, मेरा ख़याल है कि वह नबी हैं । लेकिन उनको नबी मानने का मामला हमारे दीन और धर्म से

टकराता है । इसलिए हम अच्छी तरह जांच-पड़ताल किए बिना इतनी आसानी से अपना मज़हब नहीं बदल सकते । अब हम ख़ुद चलकर सुलैमान को देखेंगे ।

सबा की रानी ने अपना लश्कर तैयार किया । जो-जो सामान ज़रूरी हो सकता था, साथ लिया और हज़रत सुलैमान से मिलने के लिए चल पड़ी । अल्लाह अपने नबियों को इल्म (ज्ञान) से तो नवाज़ता ही है, हिकमत भी अता फ़रमाता है । हज़रत सुलैमान ने एक मनोवैज्ञानिक हिकमत से काम लिया ।

सबा की रानी अभी दरबार में आने नहीं पाई थी कि आपने उसका तख़्त (सिंहासन) चामत्कारिक ढंग से पलक झपकते ही अपने दरबार में उठवा लिया और उसमें मामूली-सी तब्दीली करा दी । इसके बाद वह अपने रब का शुक्र अदा करने लगे कि यह सारी ताक़त उसी की दी हुई थी, वरना वे तो उसके एक लाचार बन्दे ही थे । यह ताक़त देकर अल्लाह मुझे आज़माना चाहता है कि मैं उसका एहसानमन्द होता हूं या उसकी दी हुई नेमतों को पाकर नाशुक्रा और घमण्डी बन जाता हूं । सच्ची बात यह है कि जो शुक्र का रवैया अपनाता है वह अपने ही लिए अच्छाई करता है । अगर कोई नाशुक्री करे तो अल्लाह तो बेनियाज़ है और अपने आप में बड़ा बुज़ुर्ग (महान) है ।

ख़ुदा की तारीफ़ और गुणगान से हज़रत सुलैमान का दरबार गूंज रहा था कि सबा की रानी वहां पहुंच गई । आपने हुक्म दिया कि अनजान तरीक़े से उसका तख़्त (सिंहासन) उसके सामने रख दो । देखें वह सही बात तक पहुंचती है या नहीं । ऐसा न हो कि वह उन लोगों में से हो जो सीधी राह से भटक गए हैं ।

तख़्त (सिंहासन) उसके सामने रख दिया गया और उससे पूछा गया, "क्या आपका तख़्त (सिंहासन) ऐसा ही है ?" उसने ग़ौर से देखा और बोली, "यह तो लगता है जैसे वही है ।" और यह कहते हुए वह भेद पा गई । उसने कहा, "हम इस चमत्कार से पहले ही समझ गए थे कि आप अल्लाह के नबी हैं और दिल में फ़रमाबरदारी क़बूल कर ली थी ।" "अच्छा तो अब पधारें ।" हज़रत सुलैमान उसे साथ लेकर अपने महल की तरफ़ चले । सबा की रानी ने साफ़-सुथरे महल को देखा तो उसके होश उड़ गए । आगे फ़र्श को देखा तो समझी पानी भरा है और अपने कपड़े घुटनों तक उठा लिए । हज़रत सुलैमान ने बताया कि यह शीशे का चिकना फ़र्श है पानी नहीं । यह

आख़िरी चीज़ थी जिसने महारानी की आंखें खोल दीं। वह समझ गई कि इस आदमी की पीठ पर ज़रूर एक परोक्ष शक्ति है और वह शक्ति है अल्लाह की।

वह हज़रत सुलैमान की सादगी और नम्रता, अल्लाह के शुक्र व एहसान के अल्फ़ाज़, मधुर और धीमी बात-चीत और वे सारी बातें महसूस करती जा रही थी जो वह देखने आई थी। उसने देखा कि एक आदमी जिन्नों, पशु और पक्षियों पर हुक्म चला रहा है। उसके महल ऐसे शानदार हैं। फिर भी कितना सादा मिज़ाज, कितना सादा लिबास और कितना आदर-सत्कार करने वाला है! वह पुकार उठी :—

"आज तक मैं अपने ऊपर बड़ा ज़ुल्म करती रही और अब मैंने सुलैमान (अलै०) के साथ अल्लाह रब्बुल आलमीन की फ़रमाबरदारी क़बूल कर ली।"

हज़रत सुलैमान उसके मुसलमान (अल्लाह के आज्ञाकारी) होने से बहुत ख़ुश हुए और बड़ी इज़्ज़त और सम्मान के साथ उसे विदा किया।

सबा की रानी ने मुसलमान होने के बाद अपने मुल्क में इस्लाम का प्रचार करना शुरू किया। अल्लाह के फ़ज़्ल से मुल्क के ज़्यादातर लोगों ने अल्लाह की फ़रमाबरदारी क़बूल कर ली।

यह सब अल्लाह का फ़ज़्ल है, वह जिसे चाहता है देता है।

(5)

मृत सागर

अलग-अलग भाषाओं के विभिन्न नक़्शों (मानचित्रों) को देखें तो उनमें आपको मृत सागर के ये नाम नज़र आएंगे : अंग्रेज़ी में डेड सी (DEAD SEA), अरबी में बहरे-लूत, हिन्दी में मृत सागर, फ़ारसी में बुहैर-ए-मुर्दार । यह मृत सागर उर्दुन (जार्डन) के मशहूर शहर अल-क्रूक के उत्तर में लम्बा-लम्बा फैला हुआ है । यह सागर बड़ा नहीं है, लेकिन इसमें कुछ ऐसी ख़ास बातें पाई जाती हैं जिनसे वह बहुत ज़्यादा मशहूर हो गया है । भूगोल का हर विद्यार्थी बेहद दिलचस्पी और बड़े ताज्जुब के साथ इस सबक़ को याद करता है ।

मृत सागर का पानी ज़हरीला है और उसका रंग काला है । उसके अन्दर कोई जानदार नहीं पाया जाता । न मछलियां हैं न मगरमच्छ और न ही कोई दूसरे जानवर । इसीलिए इसे मृत सागर कहते हैं । भूगोल शास्त्री और वैज्ञानिकों का कहना है कि किसी ज़माने में उसके आस-पास पेट्रोल, स्फ़ाल्ट और ज़हरीली गैसों के गड्ढे थे और कहीं-कहीं आग से भड़कने वाले पदार्थ भी ।

भूगोल शास्त्री कहते हैं कि पांच हज़ार साल पहले मृत सागर दुनिया में मौजूद नहीं था । फिर अचानक किस तरह बन गया ? इसका जवाब वे यह देते हैं कि वहां एक भयंकर भूकम्प आया । इसके झटकों से पेट्रोल, स्फ़ाल्ट और आग से भड़कने वाले पदार्थ भड़क उठे और इन सबके ज़ोर से यह इलाक़ा भक्क से उड़ गया और ये सारी चीज़ें ऊपर आकर फैल गईं । ज़मीन के फटने से पेट्रोल आदि के साथ पानी भी उबल पड़ा और फैल गया । पेट्रोल और दूसरी गैसों और पानी का मिश्रण ही अब मृत सागर, बुहैर-ए-मुर्दार या 'डेड सी' कहलाता है । यह सागर ज़्यादा गहरा नहीं बल्कि उथला है । लेकिन उसके ज़हरीले पानी की वजह से कोई उसमें घुस नहीं सकता । इतना ही नहीं, ज़हरीले पदार्थों के उबल पड़ने की वजह से इसके आस-पास का इलाक़ा भी बर्बाद हो गया । मृत सागर के आस-पास का मंज़र (दृश्य) इतना भयानक है कि कोई उसके पास से होकर नहीं निकलता वहां एक क़िस्म की मक्खी पाई जाती है जो इतनी ज़हरीली है कि अगर किसी को काट ले तो पूरे बदन में आग-सी जलन महसूस होती है । इसके आस-पास दूर-दूर

तक न तो आबादी है और न किसी तरह की खेती ही हो सकती है । अल-क्रूक की किसी ऊंची जगह से देखा जाए तो मृत सागर के दक्षिणी हिस्से में काले-काले जंगल जैसे नज़र आएंगे । ये ऐसे पेड़ों का झुण्ड मालूम होते हैं जैसे वे सहारा के नरभक्षी पेड़ हों और वह भी पानी के अन्दर । यह सन्देह भी किया जाता है कि पानी के अन्दर इमारतों के खण्डहर भी होंगे । भूगोल के विद्यार्थी रिसर्च के शौक में इस सागर के आस-पास घूमा करते हैं और अपनी-अपनी जांच-पड़ताल के मुताबिक़ रिपोर्ट तैयार करते हैं ।

यह तो हुई भूगोल से सम्बन्धित बातें । अब यह सुनिए कि इसी सागर को बुहैर-ए-लूत क्यों कहा जाता है ? असल बात यह है कि जिस भूकम्प के बारे में वैज्ञानिक ये सारी बातें कहते और लिखते हैं, वह भूकम्प अल्लाह के एक मशहूर नबी हज़रत लूत अलैहिस्सलाम के ज़माने में आया था और वह सिर्फ़ भूकम्प नहीं बल्कि अल्लाह का अज़ाब था । यह अज़ाब कैसे आया ? यह बड़ी दुखद और सबक़ सीखने वाली घटना है । यह तो ख़ुदा के पैग़म्बरों को झुटलाने का नतीजा था ।

इसका विवरण इस तरह है कि अल्लाह के एक बहुत बड़े पैग़म्बर हज़रत इब्राहीम (अलै०) ने दीन के प्रचार के लिए तीन बड़े केन्द्र बनाए थे । उनमें से एक केन्द्र उस जगह था जहां अब मृत सागर है । आप ने उस केन्द्र पर अपने भतीजे हज़रत लूत (अलै०) को नियुक्त किया था । हज़रत लूत को भी अल्लाह ने अपना नबी बनाया था और यह बात हज़रत इब्राहीम (अलै०) को मालूम थी ।

हज़रत लूत के ज़माने में मृत सागर की जगह (जो उस वक़्त एक हरा-भरा इलाक़ा था) जो लोग रहते थे उनको अल्लाह ने बड़ा ख़ुशहाल बनाया था । उन्हें इतने ऐश के साधन हासिल थे कि उन्होंने अपनी रंग-रलियों के तरह-तरह के तरीक़े ईजाद कर लिए थे । जब एक तरीक़े से उनका जी भर जाता तो फिर कोई दूसरा नया तरीक़ा निकाल लेते । आख़िर में शैतान ने उन्हें एक ऐसे गन्दे रोग में फंसा दिया जो उस इलाक़े पर अल्लाह का अज़ाब लाने का कारण बना ।

हज़रत लूत (अलै०) इस क़ौम पर नबी बनाए गए थे, इसलिए वह क़ौम क़ौम-ए-लूत के नाम से मशहूर हुई । हज़रत लूत के ज़माने में यह क़ौम एक ऐसी गंदी आदत में फंसी हुई थी जिसे शब्दों में बयान करना भी शर्म

की बात है । पवित्र क़ुरआन में हज़रत लूत (अलै०) की क़ौम की इस बुराई का बयान हुआ है। हज़रत लूत (अलै०) अपनी क़ौम को समझाते हुए कहते हैं :—

> "क्या तुम दुनिया की मख़लूक़ में से मर्दों के पास जाते हो और तुम्हारी बीवियों में तुम्हारे रब ने तुम्हारे लिए जो कुछ पैदा किया है उसे छोड़ देते हो, बल्कि तुम लोग तो हद से ही गुज़र गए हो ।"
> —26:165-166

यहां लफ़्ज़ 'बल्कि' अपने अन्दर बड़े मानी रखता है । इसका मतलब यह है कि लूत की क़ौम में एक यही नहीं, बल्कि और भी बहुत-सी बुराइयां थीं । वे डकैतियां भी डालते थे और इतने बेग़ैरत हो गए थे कि मजलिसों में बैठकर खुल्लम-खुल्ला बदकारी करते थे और इस तरह की बहुत-सी बुराइयां उनमें थीं ।

उनकी बदकारी और बुराइयों पर हज़रत लूत (अलै०) उनको टोकते थे और अल्लाह के अज़ाब से उन्हें डराते थे । लेकिन पानी कुछ ऐसा सिर से ऊंचा हो गया था कि वे लोग अपने कुकर्मों पर गर्व करते थे और जो लोग हज़रत लूत (अलै०) के अनुयायी बन गए थे और नेक हो गए थे उनको सहन नहीं करते थे । आख़िर में उन पापियों ने जो तय किया, वह उन्हीं के लफ़्ज़ों में सुनिए :—

"लूत और उसके ख़ानदान वालों और साथियों को अपनी बस्तियों से निकाल बाहर करो । यह लोग बड़े पाकबाज़ बनते हैं ! इन 'सन्तों' को यहां से चलता करो ।" जी हां, इसी तरह उनका तिरस्कार किया और मज़ाक़ उड़ाया । यह ढिठाई की आख़िरी हद थी । उनकी ढिठाई और हज़रत लूत (अलै०) की तब्लीग़ (प्रचार) के बारे में और भी बहुत-सी घटनाएं हैं, किस-किस का बयान किया जाए । हम उन्हें छोड़ते हैं । संक्षेप में यह कि उस बदनसीब क़ौम ने अल्लाह के नबी और उन पर ईमान लाने वाले साथियों से कह दिया कि तुम लोग हमारी बस्ती से निकल जाओ । हज़रत लूत (अलै०) के पास अल्लाह तआला ने दो फ़रिश्ते भेजे जिन्होंने अल्लाह का हुक्म सुनाया कि अब तुम इस शहर को छोड़कर कहीं और चले जाओ । हम इस क़ौम को बर्बाद कर देंगे । ये दोनों फ़रिश्ते दो ख़ूबसूरत लड़कों की शक्ल में अल्लाह के नबी के पास आए थे । उस बदकार क़ौम ने जब उन्हें देखा तो उनके

लोग दौड़े कि उन लड़कों को पकड़कर अपहरण कर लें । उन्हें क्या ख़बर थी कि यही दोनों लड़के उन्हें दुनिया से मिटाने के लिए आए थे ।

हज़रत लूत (अलै०) जानते थे । वे घबरा गए कि क़ौम तबाही के गढ़े पर है । उन्होंने फिर एक कोशिश की और अपनी ज़ुबान की पूरी ताक़त लगा दी । लेकिन उनकी क़ौम तो जैसे उन ख़ूबसूरत लड़कों को देखकर बुरी भावना से दीवानी हुई जा रही थी । उसने एक न सुनी । आख़िर फ़रिश्तों ने अल्लाह का फ़ैसला सुनाया । हज़रत लूत (अलै०) से कहा, "अब आप यहां से दूसरी जगह चले जाइए और अपने साथियों को भी ले जाइए । ख़ुदा के हुक्म में देर नहीं होगी ।" अल्लाह ने नबियों के दिलों को बहुत नर्म बनाया था । हज़रत लूत (अलै०) अफ़सोस करते हुए अपनी बस्ती से निकल गए । यह भी याद रखने वाली बात है कि उनकी बीवी ने साथ जाने से इनकार कर दिया। उनके साथ थोड़े से मोमिन लोग थे । उस वक़्त सुबह हो रही थी और पौ फट रही थी । हज़रत लूत (अलै०) और उनके साथियों के जाने के बाद एक ज़बरदस्त धमाका हुआ और एक तूफ़ान ने घेर लिया । इस तूफ़ान के साथ उस क़ौम पर पत्थरों की बारिश होने लगी । ऊपर से हवा और नीचे ज़मीन ने भी इस क़ौम को बर्दाश्त न किया । ज़मीन का वह हिस्सा जिस पर यह क़ौम अपनी बदकारी में मग्न थी, भभक उठा और फिर कुछ पता न चला कि वे सब कहां गए ।

इस भयानक अज़ाब की ख़बर यही दोनों फ़रिश्ते हज़रत इब्राहीम (अलै०) को देकर आए थे । वे वहां से चले और जब उस इलाक़े के पास आए तो दूर से धुआं ही धुआं देखा । अल्लाह के नाफ़रमानों का यह अन्जाम देखकर वे देखते ही रह गए ।

उस जगह अब मृत सागर का फैला हुआ पानी दुनिया के लिए सबक़ लेने का नमूना पेश कर रहा है और अपनी ज़ुबान से कह रहा है कि देखो बुरे काम का कैसा बुरा अंजाम होता है । आज भी देखने वाले देखते हैं कि मृत सागर के दक्षिण-पूर्व में जो इलाक़ा एकदम वीरान और सुनसान पड़ा है उसमें ढेर सारे पुराने महलों के खण्डहर मौजूद हैं जो इस बात का सबूत है कि किसी ज़माने में यह इलाक़ा बड़ा आबाद और ख़ुशहाल था । भूगर्भशास्त्र के विद्वानों (ज़मीन खोदकर खोज करने वालों) का अंदाज़ा है कि इस इलाक़े की आबादी और ख़ुशहाली का ज़माना हज़रत ईसा (अलै०) से 2300 से

1900 साल पहले तक रहा होगा । हज़रत इब्राहीम (अलै०) का ज़माना हज़रत ईसा (अलै०) से लगभग दो हज़ार बरस पहले हुआ है । यानी आज से चार या पांच हज़ार साल के बीच । इस हिसाब से वैज्ञानिक भी यही मानते हैं कि वह ज़बरदस्त भूकम्प हज़रत लूत (अलै०) के ज़माने में आया था ।

इस बर्बाद हुए इलाके की मशहूर बस्तियां सुदूम और उमूरा थीं । आज उन बस्तियों के ऊपर मृत सागर का ज़हरीला पानी फैला हुआ है और वे उसके नीचे डूबे हुए हैं । इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन ! (हम अल्लाह के लिए हैं और हमें तो उसी की ओर पलटना है ।)

(6)

क़ैसर और किसरा की जंग

रोम के बादशाह को क़ैसर और ईरान के बादशाह को किसरा कहा जाता था। नबी करीम (सल्ल०) के ज़माने में क़ैसर और किसरा के बीच भयानक जंग हुई थी। जंग से बहुत पहले क़ुरआन-करीम ने इस जंग में हार-जीत की पेशीनगोई (भविष्यवाणी) की थी। यह पेशीनगोई एक तरफ़ क़ुरआन मजीद के ख़ुदा का कलाम होने का सबूत पेश करती है और दूसरी तरफ़ हुज़ूर नबी (सल्ल०) के अल्लाह के सच्चे रसूल होने की खुली शहादतों में से एक शहादत है।

क़ुरआन मजीद कहता है :

> "रोमी पास की ज़मीन में हार गए हैं। लेकिन वह इस हार के बाद कुछ ही साल के अन्दर जीत जाएंगे। अल्लाह ही का इख़्तियार (अधिकार) है, पहले भी और बाद में भी। और वह दिन ऐसा होगा कि अल्लाह की दी हुई फ़तह पर मुसलमान ख़ुशियां मनाएंगे। अल्लाह मदद देता है, जिसे चाहता है और वह ज़बरदस्त (शक्तिशाली) और रहीम (दयावान) है। यह वादा अल्लाह ने किया है। अल्लाह अपने वादे से कभी पीछे नहीं हटता। मगर बहुत से लोग जानते नहीं हैं। –30:1-6

इस पेशीनगोई को समझने के लिए ज़रूरी है कि उस तारीख़ी (ऐतिहासिक) घटना पर एक नज़र डाल ली जाए जिसकी तरफ़ इन आयतों में खुला इशारा पाया जाता है।

नबी करीम (सल्ल०) के नबी होने से आठ साल पहले रोम के क़ैसर मॉरिस (Maurice) के ख़िलाफ़ उसके मुल्क में बग़ावत हुई और फ़ोकास (Phocas) नामी एक आदमी ने रोम के तख़्त पर क़ब्ज़ा कर लिया। उसने पहले तो क़ैसर के सामने उसके पांच बेटों को क़त्ल कराया फिर ख़ुद क़ैसर को क़त्ल कराके बाप और बेटों के सिर राजधानी क़ुसतुनतुनिया में सरे-आम लटकवा दिए। इसके कुछ दिन बाद उसकी बीवी और तीन बेटियों को भी क़त्ल करा दिया।

इस घटना से ईरान के बादशाह ख़ुसरो परवेज़ को रोम पर हमला करने

का अच्छा बहाना मिल गया । क़ैसर मॉरिस ने ईरान के बादशाह ख़ुसरो परवेज़ पर बड़े एहसान किए थे । उसी की मदद से परवेज़ को ईरान का तख़्त हासिल हो सका था और वह उसें अपना बाप कहता था । इस आधार पर उसने ऐलान किया कि मैं लुटेरे फ़ोकास से उस ज़ुल्म का बदला लूंगा जो उसने मेरे मुंह बोले बाप और उसकी औलाद पर ढाया है । सन् 603 ई० में उसने रोमी सल्तनत के ख़िलाफ़ जंग छेड़ दी । कुछ सालों में ही वह फ़ोकास की फ़ौजों को बराबर हराता हुआ एक तरफ़ एशिया-ए-कोचक में एडेसा तक और दूसरी तरफ़ शाम में हलब और अन्ताकिया तक पहुंच गया । रोमन राज्य के हमदर्दों और सहायकों ने जब यह देखा कि फ़ोकास मुल्क को नहीं बचा सकेगा तो उन्होंने अफ़्रीक़ा के गवर्नर से मदद मांगी । उसने अपने बेटे हिरक़्ल (Hercules) को एक ताक़तवर बेड़े के साथ कुसतुनतुनिया भेज दिया । उसके पहुंचते ही फ़ोकास को तख़्त से उतार दिया गया और उसकी जगह हिरक़्ल को क़ैसर बना दिया गया। हिरक़्ल ने बादशाह बन कर फ़ोकास के साथ वही कुछ किया जो उसने मॉरिस के साथ किया था । यह घटना सन् 610 ई० की है । यही वह साल है जब अल्लाह तआला ने हुज़ूर (सल्ल०) को नबी बनाया ।

ख़ुसरो परवेज़ ने जिस अख़लाक़ी बहाने से रोम पर हमला किया था, फ़ोकास के क़त्ल के बाद उसे ख़त्म हो जाना चाहिए था और अब उसे नए क़ैसर हिरक़्ल से सुलह कर लेनी चाहिए थी । मगर उसने ऐसा नहीं किया और जंग जारी रखी । अब उसने इस जंग को ईरानी मज़हब मजूसियत (आग की पूजा) और रोम के मज़हब (ईसाइयत) की मज़हबी जंग का रंग दे दिया था । इससे पहले ईसाइयों के सरकारी कलीसा ने कुछ ईसाई जमाअतों को मज़हब से ख़ारिज क़रार दे दिया था और उनको तरह-तरह से सताया जा रहा था । ये सारी जमाअतें ईरानियों के साथ मिल गईं । यहूदियों ने भी ईरानी पारसियों का साथ दिया । 26 हज़ार यहूदी ईसाई धर्म को ख़त्म करने के लिए ख़ुसरो परवेज़ की फ़ौज में शामिल होकर हिरक़्ल की रोमी फ़ौजों से लड़े ।

हिरक़्ल इस सैलाब को न रोक सका । बादशाह होते ही उसे पहली ख़बर जो मिली वह यह थी कि मुल्क के पूर्वी इलाक़े अन्ताकिया पर ईरानियों का क़ब्ज़ा हो गया । इसके बाद सन् 613 ई० में दमिश्क़ भी हाथ से निलक गया। फिर 614 ई० में बैतुल मक़दिस (यरूशलम) फ़तह करके ईरानियों ने

मसीही दुनिया पर क़ियामत ढा दी । 90 हज़ार ईसाई इस शहर में क़त्ल किए गए । उनका सबसे ज़्यादा पाक कलीसा बर्बाद कर दिया गया । उनकी असली सलीब, जिसके बारे में ईसाइयों का अक़ीदा (विश्वास) था कि उसी पर मसीह ने जान दी थी, ईरानियों ने छीनकर अपनी राजधानी मदाइन पहुंचा दी । लाट पादरी ज़करिया को भी पकड़ कर ले गए । शहर के सारे गिरजे ढा दिए गए । इस फ़तह के नशे में ख़ुसरो परवेज़ कितना चूर और मग़रूर हो रहा था इसका अंदाज़ा उसके उस ख़त से होता है जो उसने बैतुल मक़दिस की फ़तह के बाद वहीं से हिरक़्ल को लिखा जिसमें लिखा था :—

"सारे ख़ुदाओं से बड़े ख़ुदा, पूरी धरती के मालिक ख़ुसरो की तरफ़ से उसके कमीने और बदतमीज़ बंदे हिरक़्ल के नाम ।"

"तू कहता है कि तुझे अपने रब पर भरोसा है, क्यों न तेरे रब ने यरूशलम को मेरे हाथ से बचा लिया ?"

इस फ़तह के बाद एक साल के अन्दर ही ईरानी फ़ौजें उर्दुन, फ़िलिस्तीन और सीना द्वीपसमूह के सारे इलाक़े पर क़ब्ज़ा करके मिस्र की सरहदों पर जा खड़ी हुईं । यह वह ज़माना था जब मक्का मुअज़्ज़मा में एक और ही इससे कहीं ज़्यादा अहम लड़ाई जारी थी । यहां तौहीद का झण्डा उठाने वाले मुसलमान हुज़ूर (सल्ल०) के नेतृत्व में और शिर्क के पुजारी मक्का के क़ुरैशी सरदारों की सरदारी में एक-दूसरे से टकरा रहे थे ।

मुसलमान कमज़ोर थे । उनको क़ुरैशी सरदारों ने इतना सता रखा था कि उनको वहां रहना दूभर हो गया था । नौबत यहां तक पहुंच गई थी कि सन् 615 ई० में बहुत-से मुसलमानों ने अपना घर-बार छोड़कर अफ़्रीक़ा मुल्क हब्शा (इथोपिया) की ईसाई सल्तनत में जाकर पनाह ली थी । उस वक़्त मक्के में रोमियों पर ईरानियों के दबाव की आम चर्चा थी । ईरानियों की जीत पर मक्के के मुश्रिक ख़ुशियां मना रहे थे और मुसलमानों से कहते थे कि देखो, ईरान के आग के पुजारी बराबर फ़तह पर फ़तह पा रहे हैं और वह्य और रिसालत के मानने वाले ईसाई हारते चले जा रहे हैं । इसी तरह हम अरब के बुत-परस्त भी तुमको और तुम्हारे दीन को मिटाकर रख देंगे ।

रोम और ईरान की इस लड़ाई में मुसलमानों की हमदर्दियां रोम के साथ और मक्के के काफ़िरों की हमदर्दियां ईरान के साथ इसलिए थीं कि ईरानियों ने इस लड़ाई को पारसियों और ईसाइयों की लड़ाई का रंग दे दिया था और वह मुल्क को हथियाने की ग़रज़ से आगे बढ़कर उसे अपना मज़हब फैलाने

का ज़रिया बना रहे थे । बैतुल मक़दिस की फ़तह के बाद ख़ुसरो परवेज़ ने जो ख़त क़ैसर हिरक़्ल को लिखा, वह पीछे दिया जा चुका है । उसमें क़ैसर को गालियां देकर साफ़ तौर पर उसके ख़ुदा का मज़ाक़ उड़ाया है ।

ईरानी चूंकि मुश्रिक थे । एक से ज़्यादा ख़ुदाओं को मानते थे । आग के पुजारी थे । सितारों से अपनी तक़दीरें बांधे रखने वाले थे । इसी तरह मक्के के मुश्रिक भी बहुत से ख़ुदाओं को ख़ुदा की ख़ुदाई में शरीक समझते थे । इस तरह उनका मज़हब, ईरानियों के पारसी मज़हब से मिलता-जुलता था । उनके मुक़ाबले में ईसाई मुसलमानों की तरह वह्य के क़ायल थे, रसूलों को मानते थे और आख़िरत पर यक़ीन रखते थे ।

इस तरह उनका असल दीन, इस्लाम से मिलता था । यही वह वजह थी जिसके सबब मुसलमान ईसाइयों से और मक्के के काफ़िर ईरानियों से हमदर्दी रखते थे । दूसरी वजह यह थी कि हब्शा को हिजरत कर जाने वाले मुसलमानों के साथ हब्शा के ईसाई बादशाह का बर्ताव बहुत अच्छा था । उसने उनको अपने यहां पनाह दी थी । ख़ुद भी मुसलमान हो गया था और ईसाइयों की एक जमाअत मक्के में आकर हुज़ूर (सल्ल०) के हाथ पर इस्लाम कुबूल कर चुकी थी ।

ये हालात थे जब कुरआन मजीद की यह सूरत (सूरा रूम) नाज़िल हुई और इसमें यह पेशीनगोई की गई कि क़रीब की सरज़मीन में रोमी हार गए हैं, मगर इस हार के कुछ साल के अन्दर ही वह जीतेंगे और वह दिन ऐसा होगा जब अल्लाह की दी हुई फ़तह से मुसलमान ख़ुश हो रहे होंगे । इसमें एक के बजाय दो पेशीनगोइयां थीं । एक यह कि रोमी जीत जाएंगे । दूसरी यह कि मुसलमानों को भी उसी ज़माने में फ़तह हासिल होगी । उस वक़्त देखने में दूर-दूर तक इस पेशीनगोई के पूरा होने की कोई उम्मीद नज़र नहीं आती थी । यहां मक्के में मुट्ठी भर मुसलमान थे जो मारे और खदेड़े जा रहे थे । वहां रोम में ईसाई हुकूमत की हार पर हार हो रही थी । सन् 616 ई० में पूरा मिस्र ईरानियों के क़ब्ज़े में आ गया था । उन्होंने तराबलस के पास पहुंचकर झण्डे गाड़ दिए थे । एशिया-ए-कोचक में ईरानी फ़ौजें रोमियों को मारती-दबाती और भगाती हुई बासफ़ोरस के किनारे तक पहुंच गई थीं । राजधानी क़ुसतुनतुनिया के ठीक सामने क़ाज़ीकोई पर क़ब्ज़ा कर लिया था । ऐसी नाज़ुक हालत थी कि हिरक़्ल ने ख़ुसरो को पैग़ाम भेजा कि वह हर क़ीमत पर सुलह के लिए तैयार है । मगर उसने जवाब दिया :

"अब मैं क़ैसर को उस वक़्त तक न छोड़ूंगा जब तक वह ज़ंजीरों में जकड़ा हुआ मेरे सामने पेश न हो और अपने ख़ुदा को छोड़कर आग का पुजारी न बन जाए ।"

हिरक़्ल के लिए अब राजधानी को भी छोड़कर भाग जाने के सिवा कोई चारा न था । उसने ऐसा ही किया । उसने क़ुसतुनतुनिया छोड़कर क़रतांजा (ट्यूनिस) जाने का इरादा कर लिया । उस वक़्त किसी को भी यह उम्मीद न थी कि अब रोम की सल्तनत ज़िन्दा भी रह जाएगी ।

मक्के के काफ़िरों ने उस वक़्त क़ुरआन की यह पेशीनगोई सुनी तो उन्होंने ख़ूब मज़ाक़ उड़ाया । मक्के के एक रईस उबैय बिन ख़लफ़ ने हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) से शर्त लगाई कि "अगर तीन साल के अन्दर रोमी जीत गए तो मैं तुम्हें दस ऊंट दूंगा, वरना तुम मुझे दस ऊंट दोगे ।"

नबी (सल्ल०) को इस शर्त का हाल मालूम हुआ तो आपने अबू बक्र (रज़ि०) से फ़र्माया कि क़ुरआन में 'फ़ी बिज़ए सिनीन' के अल्फ़ाज़ आए हैं । अरबी ज़ुबान में 'बिज़्ए' का मतलब दस से कम लिया जाता है । इसलिए दस साल के अन्दर की शर्त करो और ऊंटों की तादाद बढ़ाकर सौ कर दो । चुनांचे हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) ने उबैय से फिर बात की और नए सिरे से यह शर्त हुई कि दस साल के अन्दर दोनों में से जिसकी बात ग़लत होगी वह दूसरे को सौ ऊंट देगा ।

सन् 622 ई० में इधर नबी करीम (सल्ल०) मक्के से हिजरत करके मदीना तशरीफ़ ले गए । उधर क़ैसर हिरक़्ल ख़ामोशी के साथ क़ुसतुनतुनिया से काला सागर के रास्ते तराबज़ोन की तरफ़ चला । वहां पहुंचकर उसने पीछे से ईरान पर हमला करने की तैयारी की । इस हमले की तैयारी के लिए क़ैसर ने गिरजों से रुपया मांगा ।

मसीही दुनिया के सबसे बड़े पादरी सुरहबीस ने अपने मज़हब को ईरानियों से बचाने के लिए गिरजाओं के नज़रानों और चढ़ावों की जमा हुई रक़म सूद पर क़र्ज़ दी । हिरक़्ल ने अपना हमला सन् 623 ई० में आरमीनिया से शुरू किया और दूसरे साल सन् 624 ई० में उसने आज़रबाईजान में घुसकर ईरानियों के पैग़म्बर ज़रतुश्त की जन्मभूमि इर्मियाह को बर्बाद कर डाला और ईरानियों के सबसे बड़े मन्दिर रूपी अग्निघर (अखण्ड ज्योति) की ईंट से ईंट बजा दी । ख़ुदा की क़ुदरत का चमत्कार देखिए । यही वह साल था जिसमें मुसलमानों को बद्र के मुक़ाम पर मक्के के मुश्रिकों के मुक़ाबले में पहली बार फ़तह

मिली । इस तरह वे दोनों पेशीनगोइयां जो सूरा-रूम की आयतों में की गई थीं, दस साल की मुद्दत ख़त्म होने से पहले एक साथ पूरी हो गईं ।

फिर रोमी फ़ौजे ईरानियों को बराबर दबाती चली गईं । सन् 627 ई० में नीनवा की निर्णायक जंग में उन्होंने ईरान की हुकूमत की कमर तोड़ दी । इसके बाद ईरानियों के शाही ठिकानों को एक-एक करके बर्बाद करते हुए हिरक़्ल की फ़ौजें तैस्फ़ोन के सामने पहुंच गईं जो उस वक़्त ईरान की राजधानी थी । सन् 628 ई० में ख़ुसरो परवेज़ के घर में बग़ावत फूट पड़ी । उसे क़ैद कर दिया गया । उसके 18 बेटे उसकी आंखों के सामने क़त्ल कर दिए गए और कुछ दिनों बाद क़ैद की मुसीबतें बर्दाश्त न करते हुए वह ख़ुद भी मर गया । यही साल था जिसमें हुदैबिया का समझौता हुआ । जिसे क़ुरआन ने 'फ़तह-ए-मुबीन' (खुली हुई फ़तह) का नाम दिया । और यही साल था जिसमें ख़ुसरो के बेटे क़बाद द्वितीय ने सभी जीते हुए रोमी शहरों से हाथ उठा लिया । उसने असली सलीब वापस करके रोम से सुलह कर ली । सन् 629 ई० में क़ैसर मुक़द्दस सलीब को उसकी जगह रखने के लिए ख़ुद बैतुल मक़दिस गया और इसी साल नबी करीम (सल्ल०) हिजरत के बाद पहली बार मक्का मुअज़्ज़मा में दाख़िल हुए । इसके बाद सूरा रूम की पेशीनगोई के सच होने में किसी को भी कोई शक न रहा । अरब के बहुत से मुश्रिक इस पेशीनगोई के सच होने से मुसलमान हो गए । उबैय बिन ख़लफ़ के लड़कों को हार मानकर शर्त के ऊंट हज़रत अबू बक्र के हवाले करने पड़े । वह उन्हें लेकर हुज़ूर (सल्ल०) की ख़िदमत में आए । आप (सल्ल०) ने हुक्म दिया कि उन ऊंटों को सदक़ा कर दिया जाए । क्योंकि शर्त उस वक़्त हुई थी जब शरीअत में जुआ हराम नहीं हुआ था, मगर अब जूआ हराम होने का हुक्म नाज़िल हो चुका था । हज़रत अबू बक्र ने उन ऊंटों को सदक़ा कर दिया । बेशक अल्लाह जिसे चाहता है उसे मदद पहुंता है । अल्लाह ने इन आयतों में अपने नबी से जो वादा किया था, उसे पूरा कर दिया । अल्लाह कभी अपने वादे के ख़िलाफ़ नहीं करता । मगर अब भी बहुत-से लोग न जानते हैं न मानते हैं । यह उनका अपना क़ुसूर है ।